CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

॥ श्रीहरिः ॥

श्रीनिमाई-संन्यास

[नाटक]

लेखक,

स्व० महात्मा श्रीशिशिरकुमार घोष

अनुवादक,

श्रीब्रजगोपालदास अग्रवाल, एम्० ए०

मूल्य पचहत्तर पैसे

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

॥ श्रीहरिः ॥

श्रीनिमाई-संन्यास

[नाटक]

लेखक,

स्व० महात्मा श्रीशिशिरकुमार घोष

अनुवादक,

श्रीब्रजगोपालदास अग्रवाल, एम्० ए०

श्रीनि० सं० क—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मुद्रक तथा प्रकाशक
मोतीलाल जालान
गीताप्रेस, गोरखपुर

आम्नाय-ग्रन्थालय
रत्ननिधि, करौंदी
वाराणसी

सं० २०२७ प्रथम संस्करण १०,०००

मूल्य पचहत्तर पैसे

गीताप्रेस, पो० गीताप्रेस (गोरखपुर)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आम्नाय-ग्रन्थालय,
भरतनिधि, करौंदी
वाराणसी-5

प्राक्कथन

महात्मा शिशिरकुमार घोष अपने समयके एक बड़े राजनीतिज्ञ थे। स्वभावमें कर्कश और अंग्रेजी शिक्षाके प्रभावके कारण कुछ नास्तिक थे। उनके मझले भाई श्रीहेमन्तकुमार घोष एक उच्च कोटिके भक्त तथा श्रीचैतन्यदेवके उपासक थे। शिशिरकुमार उनकी भक्तिका मखौल उड़ाया करते थे। भाईकी अनन्य भक्ति और निष्ठा देखकर उन्हें कौतूहलवश श्रीचैतन्यमहाप्रभुके विषयमें कुछ जाननेकी इच्छा हुई। उन्होंने 'श्रीचैतन्य भागवत' नामक ग्रन्थ मँगानेके लिये लिखा। ग्रन्थ आ गया। पैकेट खोलकर जैसे ही ग्रन्थका स्पर्श किया, उन्हें ऐसा लगा कि सारे शरीरमें एक लहर-सी दौड़ गयी हो और मन एक अनिर्वचनीय आनन्द-सागरमें डूबकर सदाके लिये शीतल हो गया हो। ग्रन्थके स्पर्शमात्रसे उनका कायाकल्प हो गया!

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

फिर तो ये महान् भक्त हो गये। इन्होंने Lord Gourang नामसे अंग्रेजीमें और 'अमियनिमाई चरित' नामसे बँगलामें छः भागोंमें श्रीचैतन्यमहाप्रभुका बड़ा सुन्दर जीवनचरित्र लिखा। 'कालाचाँद' गीता नामसे बंगलामें भगवान् श्रीकृष्णके माधुर्यरसपूर्ण स्वरूप-विषयक एक काव्यग्रन्थकी रचना की। और भी बहुत-से भक्तिसम्बन्धी ग्रन्थ लिखे।

श्रीचैतन्य महाप्रभुका चरित्र आदिसे अन्ततक अलौकिक घटनाओंसे भरा है। उनके दर्शन, स्पर्श या शब्द-श्रवणमात्रसे बड़े-बड़े मानी-अभिमानी, ज्ञानी, सदाचारी और दुराचारी व्यक्तियोंका अनायास असाधारण परिवर्तन हुआ है और वे लोग उसी क्षणसे निर्मल कृष्ण-भक्तिकी नित्य नवीन गङ्गामें गोते लगाने लगे हैं। काशीवासी संन्यासी श्रीप्रकाशानन्द सरस्वती, श्रीधाम पुरीवासी राजपण्डित वासुदेव सार्वभौम भट्टाचार्य, दिग्विजयी काश्मीरी पण्डित, मुसल्मान गवर्नर चाँद काजी, महापापी दस्यु-सरदार जगाई-माधाई आदि अनेक भाग्यशाली जीवोंने महाप्रभुकी इस अनुपम कृपाका अनुभव किया है। मनुष्योंकी कौन कहे, महाप्रभुकी वृन्दावन-यात्राके समय झारखण्डके जंगलोंके शेर-चीते आदि हिंसक पशुओं और वृक्ष-लताओं तकने उनके मुखारविन्दसे 'कृष्ण'नामकी ध्वनि सुनकर अपने स्वभावका परित्याग किया है और कृष्ण-प्रेममें उन्मत्त तथा अष्ट सात्त्विक भावोंसे भूषित होकर कृष्ण-कीर्तन किया है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'कृष्ण कृष्ण कह' करि प्रभु यबे वैल।
'कृष्ण' कहि व्याघ्र-मृग नाचिते लागिल॥
नाचे कुन्दे व्याघ्रगण मृगीगण सङ्गे।
वलभद्र भट्टाचार्य देखे अपूर्व रङ्गे॥

(चै० च० २। १७। ३७-३८)

× × ×

मयूरादि पक्षिगण प्रभुके देखिया।
संगे चले 'कृष्ण' बोले नाचे मत्त हञा॥
'हरि बोल' बलि प्रभु करे उच्च ध्वनि।
वृक्षलता प्रफुल्लित सेइ ध्वनि शुनि॥
झारिखंडे स्थावर-जंगम आछे यत।
कृष्ण नाम दिया कैल प्रेमेते उन्मत्त॥

(चै० च० २। १७। ४१—४३)

श्रीचैतन्यचरितामृतकारके शब्दोंमें जो कृष्णप्रेमरूपी धन बहुत जन्मोंतक श्रवण-कीर्तन करनेसे भी प्राप्त नहीं होता और जिसे स्वयं श्रीकृष्ण भी अपने भक्तोंसे लुका-छिपाकर रखना चाहते हैं (और केवल भुक्ति-मुक्ति दे-देकर छुटकारा पाते रहते हैं), उसी धनको श्रीचैतन्यदेवने दोनों हाथोंसे जहाँ-तहाँ लुटाया है—जगाई-माधाई-जैसे पापियोंको भी देनेमें संकोच नहीं किया है—

बहु जन्म करे जदि श्रवण कीर्तन।
तबु नाहि पाय कृष्णपदे प्रेमधन॥
कृष्ण यदि छुटे भक्ते भुक्ति-मुक्ति दिया।
कभु प्रेम-भक्ति ना देय राखे लुकाइया॥
हेन प्रेम श्रीचैतन्य दिल यथा-तथा।
जगाई-माधाई पर्यन्त, आनेर का कथा॥

(चै० च० १। ८। १५—१७)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इसलिये यह स्वाभाविक है कि बंगवासियोंने महाप्रभुको श्रीकृष्णसे भी ऊँचा स्थान दिया है। उनकी दृष्टिमें राम-कृष्ण आदि तो केवल प्रभु हैं, किंतु श्रीचैतन्यदेव 'महाप्रभु' हैं। दीन, कंगाल और दुर्भिक्षका मारा व्यक्ति तो उसीको बड़ा मानता है, जो भूखे-प्यासोंके लिये सदा अपना भण्डार खुला रखता है और उन्हें आग्रह, विनय और प्रेमसे खिला-पिलाकर दुर्भिक्षसे उनके प्राणोंकी रक्षा करता है; न कि उस साहूकारको, जो अपने धनको तिजोरीमें छिपाकर रखता है। महाप्रभुने कलिकालमें भक्तिभावके भीषण दुर्भिक्षके समय जीवोंको अनुनय-विनय और प्रेमसे श्रीकृष्ण-प्रेमामृतका पान करा उनके जन्म-जन्मान्तरकी जो भूख-प्यास मिटायी है, उसका उदाहरण अन्यत्र देखनेमें नहीं आता। इसीलिये उनके कृपापात्र श्रीरूपगोस्वामी उन्हें 'महावदान्य', 'महादाता' कहकर नमस्कार करते हैं—

नमो महावदान्याय कृष्णप्रेमप्रदाय ते।
कृष्णाय कृष्णचैतन्यनाम्ने गौरत्विषे नमः॥

दाताशिरोमणि श्रीचैतन्य महाप्रभुको जब अपने दानसे संतोष न हुआ और उन्होंने देखा कि कुछ अभिमानी, कर्मनिष्ठ, कुतार्किक लोग कृष्ण-प्रेमसे वञ्चित रह गये हैं, तो उन्होंने उन लोगोंको अपनी ओर आकृष्ट करनेके लिये विशेष रूपसे कृपाकर संन्यास-आश्रम अङ्गीकार किया और अपने प्रेम-पाशमें बाँधकर सदाके लिये कृत-कृत्य कर दिया।

संन्यास करिया प्रभु कैल आकर्षण।
जतेक पलाजा छिल तार्किकादि गण॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पढ़ुया पाषंडी कर्मी निन्दकादि यत ।
तारा आसि प्रभु-पाय हय अवनत ॥
अपराध क्षमाइल डूबिल प्रेमजले ।
केबा एड़ाइबे प्रभुर प्रेम-महाजाले ॥
(चै० च० १ । ७ । ३३–३५)

महाप्रभुने संन्यास-आश्रम ग्रहण करनेके पश्चात् स्वयं देश-विदेश भ्रमण करते हुए सबको कृष्ण-प्रेम प्रदान कर जीवोद्धार किया। फिर, श्रीनित्यानन्द, रूप, सनातन, भट्ट रघुनाथ आदि अनेक पार्षदोंमें शक्ति-संचार कर उन्हें दूर देशोंमें जा-जाकर जीवमात्रको विना किसी भेदभावके कृष्ण-प्रेम-फल खिला-खिलाकर अजर-अमर कर देनेका आदेश किया—

………आमि आज्ञा दिल सभाकारे ।
जाहाँ-ताहाँ प्रेमफल देह यारे-तारे ॥
(चै० च० १ । ९ । ३४)
………सभे फल देह यारे-तारे ।
खाइया हउक लोक अजर अमरे ॥
(चै० च० १ । ९ । ३७)

श्रीचैतन्यचरितामृतकारके विचारसे इस प्रकार भगवान् श्रीकृष्णने श्रीचैतन्य महाप्रभुके रूपमें प्रकट होकर उपपुराणमें वर्णित अपने उन वचनोंको चरितार्थ किया है, जिनमें उन्होंने वेदव्याससे कहा था कि 'मैं किसी विशेष कलियुगमें संन्यास-आश्रमका आश्रय लेकर पापहत प्राणियोंको हरि-भक्ति ग्रहण कराता हूँ—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अहमेव क्वचिद् ब्रह्मन् संन्यासाश्रममाश्रितः ।
हरिभक्तिं ग्राहयामि कलौ पापहतान् नरान् ॥

उनका कहना है कि द्वापरयुगमें श्रीकृष्णने अर्जुनको उपलक्ष्य कर जीवोंको रागात्मिका भक्तिका उपदेश किया था । यथा—

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु ।
(गीता १८ । ६५)

सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ॥
(गीता १८ । ६६)

परंतु कलियुगमें उन्होंने सोचा कि उपदेशमात्रसे काम न चलेगा । कलियुगमें पाप-वृद्धि होनेसे जीवोंकी विवेक-शक्ति जाती रही है और वे विषय-सुखसे बढ़कर और किसी सुखको समझनेकी शक्ति नहीं रखते । इसलिये मुझे स्वयं भक्त-भाव अङ्गीकार कर अवतरित होना पड़ेगा और अपने आचरणसे जीवोंको भक्ति-मार्ग दिखाकर तथा युगधर्म नाम-संकीर्तनके प्रचारसे भक्ति-सुखका अनुभव कराकर उन्हें कृष्णप्रेममें उन्मत्त करना होगा—

युगधर्म प्रवर्त्ताइमु नामसंकीर्तन ।
चारि भाव-भक्ति दिया नाचाइमु भुवन ॥
आपनि करिब भक्तभाव अंगीकारे ।
आपनि आचरि भक्ति शिखाइमु सभारे ॥
(चै० च० १ । ३ । १७-१८)

श्रीचैतन्य महाप्रभुके उपासक वेद, उपनिषद्, पुराणादिसे अनेक प्रमाण देकर उनकी भगवत्ता सिद्ध करते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कृष्णवर्णं त्विषा कृष्णं साङ्गोपाङ्गास्त्रपार्षदम् ।
यज्ञैः संकीर्तनप्रायैर्यजन्ति हि सुमेधसः ॥

(श्रीमद्भा० ११ । ५ । ३२)

अर्थात् करभाजन ऋषिने कलिके उपास्य और कलि-उपासना-का वर्णन करते हुए कहा है कि कलिके उपास्यरूपमें जो अवतीर्ण होंगे, वे स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण ही होंगे, परंतु वे अकृष्ण (पीत) वर्णसे आच्छादित होंगे; उनके अङ्ग-उपाङ्ग उनके अस्त्र और पार्षद-स्वरूप होंगे तथा संकीर्तन-प्रधान उपचारद्वारा ही उनकी उपासना होगी । और वे हैं—

सुवर्णवर्णो हेमाङ्गो वराङ्गश्चन्दनाङ्गदी ।

(म० भा० अ० प० ९२)

संन्यासकृच्छमः शान्तो निष्ठाशान्तिपरायणः ।

(म० भा० अ० प० ७२)

अर्थात् वे उत्तम वर्ण 'कृष्ण' का वर्णन (कीर्तन) करते हैं । सोने-जैसे गौर वर्णवाले हैं, चन्दन-अङ्गद शरीरपर धारण करते हैं । संन्यासग्रहण कर शान्त, निवृत्तिपरायण और कृष्ण-भक्तिमें निष्ठावान् हैं ।

परंतु महाप्रभु स्वयं भगवान् हैं या नहीं, हम इस प्रश्नपर यहाँ विचार नहीं करेंगे, कारण—यह श्रद्धा और भक्तिका विषय है, विचार और तर्कका नहीं । हम अपनी बुद्धिसे उनकी भगवत्ता-के विषयमें कुछ निर्णय नहीं कर सकते; वे स्वयं कृपाकर हमारे

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हृदयमें जैसी प्रेरणा करेंगे, वैसी ही उनके स्वरूपके सम्बन्धमें हमारी धारणा बनेगी । हमारे लिये तो यह जानना ही पर्याप्त है कि वे श्रीकृष्ण-प्रेमके महान् भण्डारी हैं और अति उदार हैं । श्रीकृष्ण-प्रेमकी लालसासे जो कोई उनके पास जाता है, वह खाली नहीं लौटता । वे यह नहीं देखते कि इसके लिये वह पात्र है या नहीं, उसने उपयुक्त साधना की है या नहीं । वे तो मात्र देना ही जानते हैं और बिना माँगे ही देनेको उत्सुक रहते हैं—

मागे वा ना मागे केहो, पात्र वा अपात्र ।
इहार विचार नाहि, जाने 'दिब' मात्र ॥
(चै० च० १ । ९ । २७)

प्रिय पाठकगण ! ऐसे दयालु महाप्रभु संन्यास लेकर श्रीकृष्ण-प्रेममें उन्मत्त होकर, नाचते-गाते, देश-विदेशमें भ्रमण करते और महात्मा शिशिरकुमार घोष-जैसे नास्तिक और भक्तिहीन लोगोंको श्रीकृष्ण-प्रेम-रस-सुधासे प्लावित करते आज इस पुस्तकके रूपमें आपके आगे आकर खड़े हैं । श्रीकृष्ण-प्रेमसे छल-छल करता स्वर्णपात्र अपने हाथोंमें पकड़े वे उत्सुक प्रेमपूर्ण नेत्रोंसे आपकी ओर निहार रहे हैं । क्या आप एक बार इसे ओठोंसे लगाकर उनकी वाञ्छा पूर्ण करेंगे ?

—(डॉ०) अवधविहारीलाल कपूर,
अवकाश-प्राप्त प्रधानाचार्य, राजकीय महाविद्यालय, रामपुर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

एक सम्मति

श्रीव्रजगोपालदास अग्रवालद्वारा किया हुआ, 'निमाई-संन्यास' का हिंदी-अनुवाद मैंने पढ़ा है। यह अनुवाद सरस और रोचक है। उसकी सफलता इस बातमें है कि पढ़नेमें वह अनुवाद नहीं मालूम होता। भाषा मुहावरेदार और सरल है। इसे पढ़कर साहित्यप्रेमियों और भक्तों—दोनोंको आनन्द प्राप्त होगा। मूल कृतिमें यथेष्ट नाटकीयता है और नायककी भावुकता पाठकको अपने प्रवाहमें बहा ले जाती है। विश्वास है कि हिंदीमें इस पुस्तकका प्रचार और सम्मान होगा। इससे हिंदीभाषी जनता एक ऐसी भावधारासे परिचित होगी, जिसने किसी समय समस्त उत्तर भारतको आन्दोलित किया था।

—(डॉ०) रामविलास शर्मा, अध्यक्ष, अंग्रेजी विभाग,
राजा बलवन्तसिंह कॉलेज, आगरा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीहरिः

श्रीनिमाई-संन्यास

[नाटक]

पात्र-परिचय

निमाई—श्रीचैतन्यमहाप्रभुका गृहस्थकालीन नाम ।

श्रीवास—
गदाधर—
मुकुन्द—
अद्वैत—
हरिदास—
श्रीधर—
} वैष्णवसमुदाय (निमाईके लीला-परिकर)

चन्द्रशेखर—निमाईके मौसा ।

निताई—निमाईके लीला-सहचर (श्रीनित्यानन्द प्रभु)

शुक्लाम्बर—निमाईके एक भक्त ।

केशव भारती—निमाईके संन्यास-गुरु ।

न्यायरत्न (न्यायालङ्कार)—निमाईके विपक्षी ।

विद्यावागीश—
नीलमणि—
} नवद्वीपवासी, निमाईके समर्थक ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शची—निमाईकी माता ।

विष्णुप्रिया—उनकी पत्नी ।

मालिनी—शचीकी सहचरी (श्रीवास-गृहिणी)

कांचना—सेविका ।

ईशान—सेवक ।

आदि ।

प्रथम अङ्क

(१)

(श्रीनिमाई पण्डितके विद्यालयका सम्मुखस्थ मार्ग । विद्यार्थीगणका प्रवेश ।)

प्रथम वि०—भाई ! हमारे अध्यापक महाशय छोटी अवस्थाके हैं, अतः अनेक व्यक्ति हमारी हँसी उड़ाते हैं; किंतु इस नवद्वीपमें उन-जैसा पण्डित और कौन है ? जब काश्मीरके दिग्विजयी पण्डित यहाँ आये थे, तब बड़े-बड़े पण्डित लोग नवद्वीप छोड़कर भाग चले थे; उस समय हमारे इन शिशु अध्यापकने ही नवद्वीपकी लाज रक्खी थी । बड़े-बड़े पण्डितोंके पेट तो बड़े-बड़े हैं, किंतु समय आनेपर वे साहस खोकर सिर झुका लेते हैं ।

द्वि० वि०—भाई ! और एक बात देखी है ? हमारे अध्यापक यों तो चञ्चलोंके शिरोमणि हैं, किंतु जब पढ़ाने बैठते हैं, तब किसीकी सामर्थ्य नहीं होती कि वह सिर उठाकर बात कर सके । यह देखो, पण्डित महाशय ही आ रहे हैं ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(श्रीनिमाईका प्रवेश एवं विद्यार्थीगणद्वारा प्रणाम)

निमाई—भाई ! चलो, सब बाजार चलें। आज कई वस्तुएँ लानी हैं।

प्र० वि०—पैसे तो लाये हैं न ?

निमाई—घरमें तो एक कौड़ी भी नहीं है।

प्र० वि०—तब क्या उधार लायेंगे ?

निमाई—उधार नहीं लाते। उधार लाना मैं अधर्म समझता हूँ। कहीं बिना चुकाये मर गये तो चिरऋणी रहना पड़ेगा।

द्वि० वि०—पैसे हैं नहीं और उधार लेंगे नहीं, फिर वस्तुएँ कैसे प्राप्त करेंगे ?

निमाई—अरे भाई, यद्यपि पैसे नहीं हैं तथापि एक बोझा आशीर्वाद तो लेकर चल रहा हूँ। देखो, यदि इस आशीर्वादके बदले कुछ प्राप्त हो जाय! (हँसी; और नेपथ्यकी ओर देखकर) वह कौन जाता है ? मुकुन्द है! देखा, देखा, उसका खेल देखा ? मैं उसे पकड़ न लूँ, इसलिये मुँहको कपड़ेसे ढककर मुझसे छिपकर भागा जा रहा है। यह चटगाँवका बाङ्गाल[1] वैद्य मुझे देखकर भागता क्यों है, बता सकते हो ?

प्र० वि०—मालूम होता है कोई विशेष कार्य है।

निमाई—अरे, यह बात नहीं है। मेरा सङ्ग करनेसे उसकी कृष्ण-भक्तिका ह्रास होता है, कारण—वह तो है कृष्ण-भक्त और

---

१. पूर्ववङ्ग निवासियोंको विनोदमें पश्चिम बंगालके लोग इसी 'बाङ्गाल' शब्दसे पुकारा करते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वैष्णव तथा मैं हूँ पाषण्ड, इसीलिये वह भागा जा रहा है। (उच्च स्वरसे) अरे मुकुन्द ! क्यों भाग रहे हो ? इधर आओ, डरो नहीं। मैं तुम्हें स्पर्श नहीं करूँगा। (मुकुन्दका प्रवेश और निमाईको प्रणाम) मुकुन्दा, बात करो। 'बाङ्गाल मनुष्य नय, मस्त एक। जन्तु लंफ दिये गाछे उठे, ल्याज नेइ किंतु ।।'[1] मुकुन्द ! आमि तोमगर धाशे गियेलाम ।[2]

मुकुन्द—'गियेलाम'—यह तो चटगाँवकी भाषा नहीं है।

निमाई—न सही, तू मुझे देखकर भागा क्यों ? तू वैष्णव है और मैं पाषण्ड, इसीलिये मेरे पास आनेमें तुझे डर था न ? मेरे पास आनेसे तेरा धर्म नष्ट हो जाता न ? किंतु, देख, तुझसे एक बात कहे देता हूँ। मैं भी एक दिन वैष्णव बनूँगा, किंतु तेरी तरह नकली वैष्णव नहीं। मैं ऐसा वैष्णव बनूँगा कि ब्रह्मा और महादेवतक मेरे द्वारपर आयेंगे। तब, तू सच समझ, तुझे मेरे पीछे छायाकी भाँति घूमना पड़ेगा। (गदाधरका प्रवेश) यह देखो, गदाधर आये हैं। अच्छा, अच्छा ! कल तर्क पूरा न होनेसे पूर्व ही चले गये थे, आज तुमको नहीं छोड़ूँगा। (हाथ पकड़ना) तुम मेरे कलके तर्कका उत्तर दे जाओ।

गदा०—तुम्हारे पैरों पड़ता हूँ, मेरा हाथ छोड़ दो। मुझे शीघ्र जाना है।

---

१. बाङ्गाल लोग मनुष्य नहीं, एक प्रकारके बिना पूँछके अच्छे जानवर हैं, जो एक ही उछालमें पेड़पर चढ़ जाते हैं।

२. मुकुन्द ! मैं तुमलोगोंके देश हो आया हूँ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निमाई—अच्छा, मेरे तर्कका उत्तर देकर शीघ्र चले जाना।

गदा०—सौ बार तुम्हारे पैरों पड़ता हूँ, मुझे छोड़ दो। मैं क्या तुम्हारे साथ तर्क कर सकता हूँ? तुम बड़े निर्दय हो; मैं तुम्हें गुरुकी भाँति मानता हूँ, बड़े भाईकी भाँति तुम्हारा आदर करता हूँ, किंतु तुम मुझे देखते ही झगड़ने लगते हो।

निमाई—जो कुछ भी हो; पर इस समय तो तर्कका उत्तर पाये विना मैं तुम्हें नहीं छोड़ूँगा।

गदा०—मैं तुम्हारे साथ जोर-जबर्दस्ती नहीं कर सकता। तुम मेरा हाथ छोड़ दो। (खींचातानी) मुझे देखते ही झगड़ने लगते हो! (क्रन्दन)

निमाई—(हाथ छोड़कर) छिः! गदाधर, तुम निरे वच्चे हो; इसीमें रो पड़े? अच्छा, इस समय तर्क छोड़ो। चलो बाजार चलें।

(श्रीवासका प्रवेश)

श्रीवास—कहाँ जा रहे हो उद्धत-शिरोमणि?

निमाई—(नमस्कार कर) अच्छा, अच्छा!

श्रीवास—बातका उत्तर नहीं देते हो, क्यों निमाई?

निमाई—मैं मनमें एक धातु सिद्ध कर रहा था, अतः अन्यमनस्कताके कारण आपकी बातका उत्तर न दे सका; क्षमा कीजिये।

श्रीवास—तुम्हारे पिता स्वर्गीय जगन्नाथ मिश्र मेरे परम बन्धु थे, तुम भी मुझे अत्यन्त प्रिय हो; मैं तुम्हें गोदमें लेकर घूमा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हूँ । अब तुम नवद्वीप-विजयी पण्डित हो गये हो, यह मेरे परम गौरवकी बात है; किंतु सोचो, तुम विद्या-चर्चा करते हो, दिन-रात माथापच्ची करते हो, इससे तुम्हें क्या लाभ है ? श्रीकृष्णके पादपद्मोंकी प्राप्ति ही जीवका परम पुरुषार्थ है; इस व्यर्थ विद्या-चर्चासे क्या तुम श्रीकृष्णके पादपद्मोंको पा सकोगे ? तुम जैसे विद्याचर्चा करते हो, वैसे ही श्रीकृष्ण-भजन करो । तुम-सरीखे पण्डितका श्रीकृष्ण-भजनमें लगना ही उचित है । हमारा वैष्णव-समुदाय बड़ा दुर्बल है, तुम यदि उस दलमें मिला लिये जाओ तो हमारा बल सौगुना बढ़ जायेगा ।

निमाई–(नतमस्तक होकर) पण्डितजी ! आपके उपदेश-वचन शिरोधार्य हैं । तथापि यह बात भी तो असत्य नहीं है कि अभी मेरी अवस्था कम है और जिगीषावृत्ति बड़ी प्रबल है । अभी श्रीकृष्णकी ओर मन नहीं जाता । यही इच्छा होती है, केवल तर्कद्वारा सभीको परास्त करूँ । पण्डितजी ! आप कुछ दिन ठहरिये, इस प्रकार विजय प्राप्त करते-करते मेरी जिगीषावृत्ति क्रमशः क्षय हो जायगी, तब मैं ऐसा भक्त बनूँगा (वस्त्रमें मुँह छिपाकर हँसी रोकते हुए) कि ब्रह्मा और महेश भी मेरे द्वारपर आयेंगे ।

(हो-हो करके श्रीवासादिका हास्य)

श्रीवास–बड़े अच्छे व्यक्तिको उपदेश देने चला मैं ! अच्छा, निमाई ! तुम परमेश्वरको भी नहीं मानते ?

निमाई–शास्त्र कहते हैं 'सोऽहं'—जो वह है, वही मैं हूँ । मैं यदि वही हूँ, तो मानूँ किसे ? आपको ? मैं ही तो परमेश्वर हूँ ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीवास—मैं चला, तुमसे हार मानी। मैं सदा प्रार्थना करता हूँ कि तुम्हारी श्रीकृष्णमें भक्ति हो।

निमाई—वह अवश्य होगी, आपका आशीर्वाद कभी निष्फल नहीं जायगा। (श्रीवासका प्रस्थान) चलो भाई, सब बाजार चलें।

(सभीका प्रस्थान)

(२)

(बाजार—विद्यार्थियोंके साथ श्रीनिमाईका प्रवेश)

ताम्बूलिया (पनवाड़ी)—ठाकुर, इधर आओ। पानका बीड़ा नहीं लेंगे ?

निमाई—दोगे तो लेंगे, किंतु भाई, हमारे पास पैसे नहीं हैं।

ताम्बू०—(मन-ही-मन) पैसे नहीं हैं। ब्राह्मणसे पैसे न भी लें तो क्या ? (प्रकाशमें) ठाकुर ! यह एक बीड़ा पान लीजिये, मैं पैसा नहीं चाहता।

निमाई—मैं बिना मूल्य बीड़ा क्यों लेने लगा ?

ताम्बू०—ऐसा नहीं, यह तो तुमको लेना ही पड़ेगा।

निमाई—उधार क्यों लूँ ?

ताम्बू०—क्यों लूँ, कहते हैं, मैं तुम्हें देना चाहता हूँ, तुम न लोगे तो मैं अभी प्राण-त्याग कर दूँगा।

प्र० वि०—यह कैसा तमाशा है !

निमाई—तो लाओ, तुम्हारे मरनेकी अपेक्षा मेरा पान लेना सहज है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

द्वि० वि०—पैसे भी नहीं देने पड़े, आशीर्वाद भी खर्च नहीं हुआ।

निमाई—हाँ, पान एकदम यों ही मिल गया।

(अग्रसर)

तन्तुवाय (जुलाहा)—ठाकुर ! एक बार मेरी दूकानपर आओ। यह देखो, शान्तिपुरकी बढ़िया साड़ी है।

निमाई—(दूकानपर जाकर) देखूँ, तुम्हारी साड़ी कैसी है ? (देखना और परीक्षा करना) यह साड़ी मुझे पसंद है, मूल्य क्या है, पर मूल्य पूछकर ही क्या करूँगा ? पासमें तो कौड़ी भी नहीं है।

तन्तु०—इसकी क्या चिन्ता है; अभी मूल्य नहीं है तो उधार ले ज़ाओ।

निमाई—उधार ? उधार करना ठीक नहीं है।

तन्तु०—पैसे हैं नहीं और उधार लोगे नहीं, फिर साड़ी कैसे मिलेगी ?

निमाई—यही तो, किंतु साड़ी सुन्दर है।

तन्तु०—ठाकुर, तुम साड़ी ले जाओ, एक वर्ष पीछे पैसे दे देना।

निमाई—यह भी तो उधार ही लेना हुआ।

तन्तु०—ठाकुर ! तुम्हारे पैर छूकर कहता हूँ, तुमसे एक पैसा भी लाभका न लूँगा। मुझे लागत भर देना।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निमाई—मैंने तो कह दिया, मेरे पास कौड़ी भी नहीं है। भाई ! मुझे क्षमा करो, मैं चला।

तन्तु०—तो चलो, मैं साड़ी लेकर घर चलता हूँ। वहाँ चलकर मूल्य दे देना।

निमाई—घरमें पैसे होते तो बाजारमें क्या खाली हाथ आता ?

तन्तु०—अच्छा ठाकुर ! साड़ी ले जाओ, इच्छा हो तो पैसे देना, इच्छा हो न देना।

निमाई—इसका अर्थ—एक प्रकारसे उधार ही लेना हुआ ?

तन्तु०—तब, मैं तो बड़ी विपत्तिमें पड़ गया। मैं तो चारों ओर अँधेरा देखता हूँ।

प्र० वि०—क्यों ! तुमपर क्या विपत्ति आ गयी ? पण्डित नहीं लेते, तुम साड़ी किसी औरको बेच देना। अन्धकार देखनेका क्या कारण है ?

तन्तु०—मेरे मनकी बात सुनोगे। मैं व्यापारी हूँ, प्राण जानेपर भी बिना मूल्य साड़ी नहीं दे सकता। पता नहीं, ठाकुर क्या मन्त्र जानते हैं, साड़ी उन्हें न देनेसे मेरे प्राण विकल हो जायँगे। (निमाईको सम्बोधन कर) ठाकुर ! अब तुम साड़ी लो, मुझे केवल आशीर्वाद दो, मैं और कुछ नहीं चाहता।

प्र० वि०—इस बार पहलेकी तरह काम नहीं पटा, कुछ आशीर्वाद देना ही पड़ा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(विद्यार्थीका साड़ी लेना और तन्तुवायका निमाईको प्रणाम करना)

निमाई–(तन्तुवायके प्रति) तुम्हारा मङ्गल हो। (छात्रोंके प्रति) चलो, श्रीधरके पास चलें, वहाँ यदि विजय प्राप्त कर सकें, तभी हमारी विजय है। (श्रीधरकी दूकानपर पहुँचकर) यह देखो, यह हैं श्रीधर! (श्रीधरसे) अच्छी तरह तो हो?

श्रीधर–(उठकर बड़बड़ाते हुए) पण्डित! मैं अच्छा भी नहीं हूँ और बुरा भी नहीं। तुम्हारे पैरों पड़ता हूँ, मेरे साथ झगड़ा मत करो। मैं गरीब हूँ, फिर भी, ब्राह्मण हूँ।

निमाई–(छात्रोंके प्रति) यह जो श्रीधरको देखते हो यह मेरा जोगाड़िया है। यह मुझे केलेके पत्ते-दोने आदि देता रहता है। आदमी बड़ा कृपण है। बहुत धन है। झोपड़ोमें रहता है, परंतु झोपड़ी धनसे भरी है।

श्रीधर–मेरे पास धन है? धन होता तो ब्राह्मणका बालक होकर दोने क्यों बेचता?

निमाई–और एक दोष यह है कि तुम वस्तुके दुगुने दाम लेते हो।

श्रीधर–अच्छा, मैं यदि दुगुने दाम लेता हूँ तो मेरी दूकानपर क्यों आते हो?

निमाई–(छात्रोंके प्रति) श्रीधर परम भक्त और सत्यवादी है, फिर इससे झगड़ा करनेकी किसकी इच्छा न हो? (श्रीधरसे) मैं अपना जोगाड़िया छोड़कर दूसरी दूकानपर क्यों जाऊँ? अच्छा,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीधर ! तुम्हें अपने व्यवसायमें जो लाभ होता है, उसका आधा भाग श्रीगङ्गाजीको दिया करो । हो सके तो कुछ मुझे भी दिया करो । कारण, तुम्हारे ऊपर मैं भी कुछ अधिकार रखता हूँ । जानते हो, तुम आधा भाग जिस गङ्गाको दोगे, मैं उसका पिता हूँ ।

श्रीधर–(कानोंमें उँगली देकर) श्रीविष्णु ! श्रीविष्णु ! तुम्हें गङ्गाजीसे भी कुछ डर नहीं लगता । मनुष्य जितना बड़ा होता है, उतना ही शान्त होता है; परंतु तुम तो क्रमशः उतने ही अधिक चञ्चल होते जा रहे हो !

निमाई–यह बात छोड़ो । अच्छा, तुम्हारे पास बहुत धन है, यह क्या असत्य है ?

श्रीधर–दुहाई पण्डित ! मेरे साथ झगड़ा मत करो । मैं तुम्हें दोने-पत्ते सब बिना दाम दे दूँगा ।

निमाई–तो फिर झगड़ा किस बातका ? तुम्हारी जो निन्दा की है, उसे वापस लेता हूँ । (छात्रोंसे) तुम सब सुनो, श्रीधर कृपण नहीं है, इसके पास धन भी अधिक नहीं है और यह दाम भी अधिक नहीं माँगता । (श्रीधरसे) किंतु श्रीधर ! समझ लो, दोने-पत्ते बिना दाम देने होंगे ! (छात्रोंसे) इस बार आशीर्वाद नहीं, केवल धमकी देकर विजय पायी है । (सभीका प्रस्थान)

(३)

(शची माँका अन्तःपुर–शची और मालिनीकी बातचीत)

शची–विजयादशमीपर निमाई गयाधाम गया था, यह तो तुम जानती ही हो । पितृश्राद्ध करने जा रहा था, इसलिये मैं उसे रोक

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

न सकी । निमाईको चञ्चल जानकर उसके साथ उसके मौसा भी गये थे । बहुत-से विद्यार्थी भी साथ थे । अब चार महीने बाद वह घर लौटकर आया है ।

मालिनी—(बीचमें ही) निमाई निर्विघ्न लौट आया है, इसलिये सारे नवद्वीपमें स्थान-स्थानपर आनन्दोत्सव मनाये जा रहे हैं, केवल एक तुम ही उदास हो । मुझे क्यों बुलाया था, क्या हुआ ? तुमने रो-रोकर आँखें क्यों लाल कर ली हैं ?

शची—बहन, यही बतानेके लिये तो बुलाया था । पहले आठ कन्याएँ हुईं और सभी मर गयीं । फिर पुत्र विश्वरूप हुआ; विश्वरूपके दस वर्ष बाद निमाई हुआ । विश्वरूप अपने रूप-गुणोंके लिये संसारमें धन्य था, किंतु वह सोलह वर्षकी अवस्थामें संन्यासी होकर न जाने कहाँ चला गया । (क्रन्दन)

मालिनी—चुप करो, निमाईको लेकर शान्त रहो । जिसका निमाई-जैसा पुत्र है, उसे फिर दुःख क्या हो सकता है । जो निमाईकी माँ है, वह तो जगत्में पूज्य है, धन्य है ।

शची—सुनो बहन ! स्वामी वैकुण्ठ पधार गये । निमाईका मुख देखकर ही मैं प्राण स्थिर करती रही । उसका विवाह किया, वह दिग्विजयी पण्डित हुआ । मैं एक प्रकारसे सुखी थी । मेरी बहू साक्षात् लक्ष्मी है, किंतु मालूम होता है, निमाई अपने भाईकी भाँति संसार छोड़ जायगा । मैं जानती हूँ, वह अब घरमें नहीं रहेगा ।

मालिनी—बहन ! तुम्हारी अवस्था बहत्तर वर्षकी हो गयी है, इसलिये तुम्हें 'बहत्तरा' ने पकड़ रक्खा है । निमाई संसार छोड़

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जायगा ? घरमें रूपवती स्त्री, निमाई स्वयं विद्या-रसमें उन्मत्त । उसकी तो विश्वरूपकी भाँति धर्ममें उतनी आसक्ति भी नहीं है ?

शची—बहन ! निमाईका वह भाव इस समय नहीं है । आज मैंने उसका जो भाव देखा, उससे मेरे प्राण सूख गये हैं । निमाई गयाजी जाकर कुछ और ही हो गया है ।

मालिनी—अब क्या भाव हो गया है निमाईका ? वह सदा हँसता है, सभीके साथ आमोद-विनोद करता है, उसे तैरना इतना अच्छा लगता है कि प्रतिदिन चार बार गङ्गा पार किये बिना उसका मन नहीं भरता । वह क्या संसार छोड़कर चला जायगा ? निमाई चलनातक नहीं जानता; जब चलता है, तब दौड़ता हुआ ही चलता है । वह इतना चञ्चल है । क्या वह संन्यासी हो जायगा ?

शची—बहन ! निमाई गयामें सारे खेल-कूद खो आया है । अब तो वह एक दूसरा ही व्यक्ति बन गया है ।

मालिनी—दीदी, निमाईके सम्बन्धमें उसके एक छात्रने जो कविता रची है, वह क्या तुमने सुनी है ? मुझे याद है, सुनो—

अति शिशुमति, सरल प्रकृति[1] ।
तोहे[2] तीक्ष्णबुद्धि, बृहस्पति-पति ॥
सुधांसु बदन, कांचन बरन ।
सुबलित अङ्ग मधुर बचन ॥
कमल-लोचन[3] वहितेछे[4] वारि ।
सेइ श्रीगौराङ्ग, पराण हामारि[5] ॥

× × × ×

१. स्वभाव । २. उसपर भी । ३. नेत्रोंसे । ४. वहता रहता है । ५. ऐसे श्रीगौराङ्ग हमारे प्राण हैं ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

साढ़े चारि हस्त अङ्ग दैर्घ्य परिमान।[१]
रूप देखि करे सबे देव-शिशु-ज्ञान॥
नव्यकाले[२] दिग्विजयी करिलेन[३] जय।
सेइ श्रीगौराङ्ग मोर[४] प्राणनाथ हये[५]॥

× × × ×

कौतुक रहस्य सदा सङ्गी सङ्गे[६]।
साँतारे आनन्द गङ्गार तरङ्गे॥[७]
नगर-भ्रमण चपलेर[८] मत[९]।
नौका-विहारादि, दौड़ा-दौड़ी रत॥
आमार गौराङ्ग, बड़इ[१०] चंचल।
सेइ गुणे मोर पराण हरिल[११]॥
रूपेर सागर, गुणेर पर्वत।
मधुर प्रकृति, पवित्रचरित॥
भालबासा दिया गठित हृदय।[१२]
अलपे[१३] संतोष, दोष नाहिं लये[१४]॥
गुरुजने देखि[१५] तखनि प्रणाम।
छोट बड़ सबा समान सम्मान॥
तार कत गुण कहिते ना जानि।[१६]
गौराङ्ग[१७] पागल करिल[१८] पराणि[१९]॥

× × × ×

---

१. उनका श्रीअङ्ग साढ़े चार हाथ लम्बा है। २. युवावस्थामें। ३. किया। ४. मेरे। ५. हों। ६. साथमें। ७. उन्हें गङ्गाकी लहरोंके साथ तैरनेमें आनन्द आता है। ८-९. चञ्चल व्यक्तिकी भाँति। १०. बड़े ही। ११. उनके इन सब गुणोंने मेरे प्राण हर लिये हैं। १२. उनका हृदय प्रेमसे बना हुआ है। १३. थोड़ेमें ही। १४. लेते। १५. तत्क्षण। १६. उनमें कितने गुण हैं, मैं बता नहीं सकता। १७. गौराङ्गने। १८-१९. (मेरे) प्राण पागल कर दिये हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निर्मल शीतल सदा याँर[1] मन ।
मुखे[2] मधु हाँसि, प्रसन्न बदन ॥
स्नेह-दिठे चाहे सकलेर पाने[3] ।
सदा बिन्दु झरे कमल-नयाने ॥
जार मधु भाषे जुड़ाय श्रवणं[4] ।
हेनं[5] श्रीगौराङ्ग आमारि[6] शरणं ॥

इसपर भी, निमाई कितना ही चञ्चल हो, उसका हृदय स्नेह एवं दयासे परिपूर्ण है। तुमको इस वृद्धावस्थामें छोड़कर वह चला जायगा, यह असम्भव है।

शची—बहन ! निमाईको चार महीने बाद घर आया जान मैं खुशीके मारे भागी हुई बाहर गयी; मैंने देखा कि वह अन्यमनस्क है। पहले तो शायद उसने मुझे पहचाना नहीं। मैंने उसके गलेमें बाँह डाली, तब कहीं उसका ध्यान भङ्ग हुआ। पास आकर मुझे प्रणाम किया। कुछ कहनेको हुआ, किंतु आँखोंमें पानी भर आया, भावावेशके कारण कुछ बोल नहीं सका। नवद्वीपके अनेक पुरुष उससे मिलने आये, उनके साथ भी वही भाव ! लगता है मानो वह दीनसे भी दीन है। जिस-तिसके पैर पकड़ने दौड़ता है। हर समय न जाने क्या कहता रहता है, शायद कृष्ण-नाम जपता है।

मालिनी—क्यों, ऐसा क्यों हो गया ?

शची—मैंने निमाईका ऐसा भाव देखकर उसके मौसाजी तथा

---

१. जिनका । २. श्रीमुखपर । ३. वह सभीकी ओर स्नेह-दृष्टिसे देखते हैं। ४. जिनके मधुर वचन सुनकर कानोंको शान्ति मिलती है। ५. ऐसे। ६-७ मेरे आश्रय हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

साथियोंसे इसका कारण पूछा। उन्होंने जो कुछ कहा, उसे सुनकर मेरे प्राण न जाने कैसे हो गये हैं। बहन! तुमने ईश्वरपुरीका नाम सुना है? उन-जैसा भक्त संसारमें नहीं है। गयाधाममें उन्होंने निमाईको मन्त्र दिया है। ईश्वरपुरीके द्वारा कानमें मन्त्र उच्चारण करते ही निमाई विह्वल हो गया। तभीसे वह निरन्तर श्रीकृष्णनाम उच्चारण करता रहता है और उसे पूर्णरूपसे बाह्य-ज्ञान नहीं रहता।

मालिनी—तो बहन! डरती क्यों हो? घरमें जो बहू है, वह दो ही दिनोंमें उसे सब कुछ भुला देगी; और फिर कृष्णनाम जपना तो अच्छी बात है। तुम व्यर्थ मत डरो। अच्छा, मैं अभी आती हूँ।

(मालिनीका प्रस्थान)

शची—दिन बीत चला, कार्य शीघ्र पूरा करना होगा। (उच्चस्वरसे) कहाँ हो बहू विष्णुप्रिया? एक बार इधर आओ। (विष्णुप्रियाका प्रवेश) बहू! शीघ्र रसोई बनाओ, और ऐसा यत्न करो कि आज निमाई शीघ्र ही सो जाय। शीघ्र चोटी और शृङ्गारादि कर नये बिस्तर बिछाओ। (दोनोंका प्रस्थान)

(४)

(निमाईका शयनागार, निमाई बायें हाथपर मुख रखकर पलङ्गपर बैठे हैं। विष्णुप्रियाका चन्दनकी कटोरी और पुष्पमाला लिये प्रवेश)

विष्णु०—क्या, बैठे-बैठे सो रहे हो? (कुछ रुककर) बोलो न! क्या रुष्ट हो गये हो? देखूँ, मुख तो देखूँ! (हाथसे मुख ऊपर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

करती हैं) यह क्या, नेत्रोंमें जल क्यों ? तुम रोते हो न ! क्यों रोते हो ? ओ माँ, यह क्या ? रो रहे हो ! चार मास बाद घर लौटनेपर, मुझे देखते ही रोने लगे ! बोलो, बोलो । तुम्हें क्या हो गया है ! मैंने क्या अपराध किया है ? लगता है कि तुम्हें ज्ञान ही नहीं है । यह क्या, माँ ! माँ !

(द्रुतगतिसे प्रस्थान तथा शचीके साथ पुनः प्रवेश)

शची—निमाई, तू क्यों रोता है ? ओ निमाई, निमाई, बोल, तुझे क्या हो गया है ? हाय ! देखो, निमाई कैसा हो गया है ! यह देखो, निमाईके अश्रुजलसे बिस्तर भीग गया है । (निमाईके सिरपर हाथ रखकर) बोल बेटा ! बेटा क्यों रोता है ? निमाई, ओ निमाई, तुझे मेरी शपथ है, बता । तू रोता क्यों है ? (धीरे-धीरे माथा सहलाना)

विष्णु०—माँ, माऌम होता है, अचेत हैं ।

शची—आँखोंमें जलके छींटे मारती रहो । (जलके छींटे मारना) ओ निमाई, तू रोता क्यों है ?

निमाई—(कुछ चैतन्य होकर) माँ, मैं, मैं-मैं, माँ तुम क्या कह रही हो ?

शची—कह रही हूँ अपना सिर । चार महीने बाद घर लौटा, नवद्वीपमें सब खुशियाँ मना रहे हैं और तू रो रहा है ! तुझे क्या दुःख है ? क्या अभाव है ? तू अध्यापकोंका शिरोमणि है, जन-समुदायमें पूज्य है । रोता क्यों है ?

निमाई—मैं क्या रोता हूँ ? क्यों माँ, मैं तो बड़े आनन्दमें हूँ ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शची—आनन्दमें तो खूब है। जबसे घर आया है, अन्यमनस्क है। आँखोंका जल चेष्टा करनेपर भी नहीं रुक रहा है। मुझसे बातें भी नहीं करता; बहू कमरेमें आयी, यह देख, चन्दन और माला एक ओर पड़े हैं; और तू रोता है!

निमाई—माँ, तुम चिन्ता मत करो। तुम मेरे आँसुओंको देखकर दुखी हो रही हो, इससे मुझे बड़ा दुःख होता है; किंतु ये मेरे दुःखके आँसू नहीं हैं, ये तो आनन्दके हैं।

शची—आनन्दके आँसू कैसे?

निमाई—माँ, मैं सो गया था। इसी बीच मैंने एक बड़ा शुभ स्वप्न देखा। सुनो माँ! मैंने एक कृष्णवर्ण ऐसे युवा पुरुषको देखा, जिनके रूपका प्रकाश जगत्में फैला है। उनके सर्वाङ्गसे दिव्य लावण्य फूटा पड़ रहा है। कण्ठमें वनमाला है। वे मेरे पास आये, मुझे देखने लगे। उनके दोनों नेत्र पद्मदल-जैसे थे। वे नेत्र नहीं, प्रेमके सरोवर थे। उन्होंने मेरी ओर देखते ही मानो मेरा हृदय चुरा लिया। वे मेरे प्राण हैं! माँ, मेरे प्राण! मेरे····(मूर्च्छित होकर गिरना)

शची—विष्णुप्रिये! शीघ्र निमाईको पकड़ो; देखो, मेरा निमाई कैसा हो गया! स्थिर, अपलक नेत्र! निमाई क्या मुझे छोड़ गया? ओ निमाई, निमाई, बोल। ईशान, ओ ईशान, जल्दी आ। मेरा निमाई कैसा हो गया है!

(ईशानका प्रवेश)

ईशान—क्यों माँ, क्या हुआ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शची—निमाई अपना स्वप्न सुना रहा था, बोलते-बोलते हठात् गिर पड़ा। यह देख, नेत्रोंकी पुतली स्थिर है, पलक भी नहीं गिर रही है।

ईशान—माँ, इतना क्यों डरती हो? ठाकुर बीच-बीचमें ऐसे हो जाते हैं। गयासे यहाँतक आनेमें कई बार ऐसा हुआ है। मैं परीक्षा करता हूँ, धीरज रक्खो। यह देखो, साँस चल रही है, चिन्ताकी कोई बात नहीं है।

(निमाईकी आँखोंमें छींटे मारना, उनका नाम लेकर पुकारना तथा कानोंमें 'कृष्ण'नाम उच्चारण करना)

निमाई—(हरि-हरि कह उठकर तथा इधर-उधर देखते हुए) माँ, क्या कह रहा था? हाँ, स्मरण हो आया। वे मेरे प्राणोंके प्राण हैं, उन्होंने एक बार ही मेरी ओर देखा, तभीसे मैं अपने वशमें नहीं हूँ। माँ, फिर उन्होंने जो कुछ किया, वह मैं कह नहीं सकता। उन्होंने पकड़कर मुझे हृदयसे लगा लिया। उस गाढ़ आलिङ्गनको पाते ही मेरा सर्वाङ्ग आनन्दमें रम गया। माँ, वे अब कहाँ गये? उन्हें देखे बिना तो मैं नहीं बचूँगा। यदि मुझे बचाना चाहती हो तो एक बार उन्हें बुला दो। (ऊपरकी ओर देखकर) अरे, तुम मेरे चित्तको चुराकर क्या छिप गये? (पुनः मूर्च्छित होना; शचीका व्यस्त होना)।

ईशान—गयासे आकर ठाकुर कितनी ही बार इस प्रकार मूर्च्छित हुए हैं। चिन्ताकी बात नहीं है, अभी ठीक हो जायँगे। 'कृष्ण' नाम ही इनकी ओषधि है। आहा, चन्द्रवदन मलिन हो गया।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गीत

चन्द्रवदन मलिन हयेछे[1] रे।
हयेछे रे, नयन झुरिछे[2] रे॥
नीरवे रोदन, नमित वदन[3]।
तरङ्गे एलुये एलुये अङ्ग पड़िछे रे[4]॥

द्वितीय अङ्क

(१)

(सुरधुनि-तीर; नवद्वीपका 'बारोकोणा' घाट, न्यायरत्न और विद्यावागीशका प्रवेश)

*न्याय*०—वे कौन आ रहे हैं, शायद नीलमणि हैं ? (नीलमणि तर्कवागीशका प्रवेश) अरे नीलमणि, कब आये ?

*नील*०—अभी पूर्वाह्णके समय।

*न्याय*०—अध्ययन पूर्ण हो गया ?

*नील*०—कुछ शेष है। अधिक ठहर नहीं सका, इसीलिये चला आया हूँ।

*विद्या*०—अच्छा, नीलमणि! तुम अपना देश छोड़कर मिथिला क्यों गये ? अब तो हमारे नवद्वीपमें भी न्याय पढ़नेकी सुविधा है। जो कुछ असुविधा थी, वह वासुदेव सार्वभौमने दूर कर दी है।

---

१. हो गया है। २. छपछपा रहे हैं।

३. नतमस्तक हो रो रहे हैं, लेकिन रोदन निःशब्द है।

४. शरीर भाव-तरङ्गोंमें झूम-झूम पड़ता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

क्षणंजन्मा सार्वभौमने समस्त न्यायपुस्तकोंको कण्ठस्थकर नवद्वीपमें विद्यालय स्थापित किया है। अपनी मानवातीत अद्भुत स्मरणशक्तिसे उन्होंने नवद्वीपका सारा दुःख दूर कर उसकी लाज रख ली है।

नील०—आपलोगोंने न्याय-ग्रन्थोंको प्राप्त कर लिया है, यह सत्य है; किंतु अभीतक कोई अच्छा अध्यापक प्राप्त नहीं किया। न्यायशास्त्रका प्रमुख स्थान तो तिरहुत है। यहाँ एक वासुदेव सार्वभौम अवश्य थे, किंतु उन्हें भी तो उत्कल-सम्राट् प्रतापरुद्रने वृत्ति देकर अपने देशमें रख लिया है। अब यहाँ न्यायका योग्य अध्यापक कौन है?

न्याय०—क्यों, काणभट्ट जो हैं! सार्वभौमके पीछे काणभट्टने उसी स्थानपर विद्यालय चला रक्खा है। ये सार्वभौमसे किसी भी अंशमें कम नहीं हैं, बहुत-से व्यक्ति तो इन्हींको श्रेष्ठ नैयायिक मानते हैं।

नील०—काणभट्ट कौन हैं?

न्याय०—अरे, 'दीधिति'[२] ग्रन्थके लेखक रघुनाथका नाम नहीं सुना?

नील०—सुना है, उनका नाम किसने नहीं सुना? किंतु शैशवसे मैं मिथिलामें ही रहा हूँ, इसलिये अध्ययन वहीं पूरा करनेकी इच्छा थी। सुना है कि नवद्वीपमें एक अपूर्व घटना हुई है, तभी शीघ्रतासे यहाँ चला आया हूँ।

---

१. एक प्रकारका कटु शब्द। ग्रामीण भाषामें 'काल कौ' (कलका)।

२. 'दीधित' न्यायशास्त्रकी प्रसिद्ध पुस्तक।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

न्याय०—क्या अपूर्व घटना !

नील०—यह बात तो चारों ओर फैली हुई है कि नवद्वीपमें श्रीकृष्णका अभ्युदय हुआ है ।

न्याय०—(सहास्य) श्रीकृष्ण अवतीर्ण होंगे—यह बात किसी शास्त्रमें लिखी है ? हाँ, कुछ व्यक्तियोंने निमाई पण्डितको भगवान् मान रक्खा है । निमाई अच्छा व्यक्ति था, बुद्धि तीक्ष्ण थी, कुछ पाण्डित्य भी; किंतु दरिद्रकी संतान भगवान्का पद पा लिया; छेना-मक्खन[1] खाकर एकदम उसका सिर फिर गया है ।

नील०—मैं समझ नहीं सका । यदि निमाई पण्डितकी स्वयं ही ईश्वर बननेकी इच्छा है तो लोग उन्हें यह पद क्यों देंगे ? यदि कोई भगवान् बनने जाता है तो लोग उसे कुचल नहीं देते ? अवश्य ही अनेक व्यक्तियोंने निमाई पण्डितको भगवान्का पद दिया है । इतने लोग उन्हें भगवान् न मानते, तो ऐसा प्रचार क्यों होता ? तिरहुततक यह संवाद कैसे पहुँचता ?

विद्या०—निमाई पण्डितमें अवश्य ही असीम शक्ति है । एक तो वह देखनेमें परम सुन्दर हैं; इतना रूपवान् संसारमें कदापि ही कोई हो । दूसरे, उनका नवीन यौवन है । पाण्डित्यकी अवधि नहीं है । उनकी भक्ति देखकर तो प्रह्लाद तो क्या, शुकके प्रति भी अवज्ञा हो जाती है । इतने गुण होनेपर मनुष्य उन्हें ईश्वर मानें तो इसमें विचित्रता ही क्या है ?

---

१. गरम दूध फाड़कर प्राप्त किया गया मक्खन-सा पदार्थ ।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

*न्याय*०—तुम क्या निमाई पण्डितके ही दलके हो ! तुम्हारी बातोंसे तो ऐसा ही पता चलता है ।

*विद्या*०—निमाई पण्डितकी अवज्ञा मत करो, एक बार उनकी शक्ति देखो । अवस्थामें उन्हें शिशु ही समझो, केवल तेईस वर्षकी आयु है; किंतु इतनी-सी अवस्थामें उन्होंने क्या पद प्राप्त किया है ! जिस समय दिग्विजयी केशव काश्मीरी आये थे, अध्यापक लोग घरोंमेंसे निकलतेतक न थे । वे काश्मीरी विद्वान् इन्हीं शिशु अध्यापकके निकट परास्त हुए थे । निमाईने अठारह वर्षकी अवस्थामें नवद्वीपमें विद्यालय स्थापित किया था, जो कोई दूसरा न कर सका और उनके जितने छात्र हैं, उतने शायद और किसीके नहीं । बुद्धिमन्त खाँ एक प्रकारसे नवद्वीपका राजा है, पर वह भी निमाईको भगवान् मानकर पूजता है । नवद्वीपमें जगाई-मधाई यथेच्छाचार करते थे; ब्राह्मणकुमार होकर भी गोवध, विप्रवध, स्त्रीवध और मद्यपान करते थे । ऐसा कोई दुष्कर्म नहीं, जो उनसे बचा रहा हो । त्रिलोकीमें उन-जैसा कोई पापी नहीं था । निमाई पण्डितने उन्हें भी निष्पाप कर दिया । इस समय उनका करुण-क्रन्दन सुनकर हृदय विदीर्ण हो जाता है । इस नगरका राज-प्रतिनिधि चाँद काजी, गौड़देशके बादशाहका दौहित्र है । वह अपनी पठान सेना लेकर निमाई पण्डित एवं उनके भक्तोंपर अधिकार करने चला था, किंतु वही बादशाहका दौहित्र आज लगातार 'कृष्ण' नाम जपता है और श्रीनिमाईका चरणाश्रित हो गया है । फिर, ऐसे व्यक्तिको सामान्य मनुष्य कैसे कहा जा सकता है ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

न्याय०—रहने दो अपने निमाई पण्डितको। उसका नाम सुनकर मेरा तो सिरसे पैरतक सारा शरीर जल उठता है। उसने देशका सर्वनाश कर दिया है; कहता है—

'चाण्डालोऽपि द्विजश्रेष्ठः कृष्णभक्तिपरायणः।'[१]

ब्राह्मणका अपमान करने और तेली-तमोली आदि नीच व्यक्तियोंसे स्पर्धा करनेके लिये ही उसका जन्म हुआ है। यदि कहीं उसका धर्म चल निकला तो समझो ब्राह्मणोंका पद समाप्त हो लिया। और वह करता क्या है?—उसके भक्त केवल कृष्ण-कृष्ण कहकर चिल्लाया करते हैं। इसका परिणाम क्या होगा, जानते हो? श्रीभगवान् हृदयमें सोये हुए हैं, चिल्लाकर उन्हें जगानेसे वे कुपित हो जायँगे और उनके क्रोध करनेपर खेतमें एक दाना धान भी नहीं होगा। सभी लोग भूखों मर जायँगे।

नील०—उनका धर्म चल निकला तो नीच वर्णके लोगोंकी पद-वृद्धि हो जायगी। इसीलिये आपका निमाई पण्डितके प्रति रोष है? इस नवद्वीपमें उनके इतने विपक्षी हैं, मैं नहीं जानता था।

न्याय०—हैं क्यों नहीं, हम सभी विपक्षी हैं। ब्राह्मण-पण्डितोंमें अधिकांश ही विपक्षी हैं, तभी तो हम सब मिलकर काजीके पास नालिश करने गये थे। काजीने उसके भक्तोंके मृदङ्ग तोड़ डाले, उसकी मरम्मत करवायी और बड़े क्रोधमें भरकर नाना प्रकारसे

---

१. ब्राह्मणसे (जो कृष्णभजन नहीं करता) कृष्णभक्तिपरायण चाण्डाल भी श्रेष्ठ है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उसपर शासन करना आरम्भ किया। किंतु एक दिन निमाई नगर-कीर्तनके लिये बाहर निकला, लाखों व्यक्ति उसके साथ थे। निमाई उस विराट् दलको ले काजीके घर जा पहुँचा। काजीने इतनी भीड़से डरकर स्वीकार कर लिया कि निमाई भगवान् है। उसी समयसे निमाईका प्रभाव और भी बढ़ गया !

नील०—हमारा देश इसी प्रकार नष्ट हो गया है। हिंदुओंमें जब आपसमें झगड़े हुए, तब उनके प्रतिविधानके लिये उन्हें विधर्मियोंका आश्रय लेनेमें संकोच नहीं हुआ ?

न्याय०—निमाई पण्डितको हिंदू कौन कहता है। वह चिल्ला-चिल्लाकर हरिनाम पुकारता है, फिर क्या वह हिंदू है ? श्रीवास पण्डितके घर किंवाड़ बंद करके आँगनमें शोर-गुल मचाता है और कहता है—कृष्णकीर्तन करते हैं। बिल्कुल झूठ; वहाँ यह क्या-क्या करता है, यह बताना भी पाप है। क्या बताऊँ महाशय ! अब तो हमारा इस नगरमें रहना भी ठीक नहीं है। रात-दिन मृदङ्ग-करताल-ध्वनि, हरिध्वनि और कृष्ण-कृष्णकी चीख-पुकार ! क्या सभ्य लोग यह सब सहन कर सकते हैं ? जगाई-मधाईमें एक विशेष गुण था कि वे हरिनाम नहीं सुन सकते थे, किंतु उनको भी न जाने, किस मन्त्र-बलसे इसने वशमें कर लिया। दीखता है कि हमें यह नगर छोड़ना पड़ेगा। यह सुनो, इधर ही शोर-गुल आ रहा है।

(दूरसे कीर्त्तन-ध्वनि)

नील०—ठीक, ठीक, देखें कैसा कीर्तन है और कैसे हैं निमाईके भक्त !

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(श्रीधर, मुकुन्द, गदाधर आदिका नृत्य-गान करते हुए प्रवेश)

गान

आर भय नाइ, भय नाइ, आँधार गेलो
नवद्वीपचाँदेर उदय होलो ।
आँधार दूरे गेलो रे !
घोर आँधार घेरिलो संसार, धर्म दूरे गेलो
रइते नारि प्रभु आपनि एलो ।
जीबेर मलिन दशा देखे रे !
पतित देखिया काँदिया काँदिया, जीवे करिलो कोल
श्रीगौराङ्गेर जय जय बोलो
जय जय जय बोलो रे !
होलो नयनगोचर रात दिने रे जीवेर प्राणनाथ
ताप-भय दूरे गेलो रे ! *

नील०—देखते हो, ये आनन्दमें गले जा रहे हैं । इन लोगोंने इतना आनन्द कहाँसे पाया ? इतना आनन्द जो दे सकता है, वह निश्चय ही आनन्दमय है । निमाई पण्डित आनन्दमय हैं । (मुकुन्द आदिसे) अरे तुम कौन लोग हो ?

---

* (पद्यानुवाद) नवद्वीप-चन्द्र श्रीनिमाईके उदय होनेसे अन्धकार दूर हो गया है, अतः अब और भय नहीं रहा, भय नहीं रहा । संसार घोर अन्धकारसे घिरा हुआ था, धर्म नष्ट हो गया था, ऐसी अवस्थामें प्राणियोंकी दीनावस्था देखकर प्रभु स्वयं ही विवश होकर यहाँ आये । उन्होंने पतितोंकी अवस्था देख रो-रोकर सभीको हृदयसे लगाया, ऐसे श्रीगौराङ्गका जयघोष करो । जीवोंके प्राणनाथ इतने दिनों बाद नयनगोचर हुए हैं और अब सभी ताप-भय दूर हो गये हैं ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मुकुन्द—अरे वही—हमारा परिचय सुनोगे। बात करते-करते हमारा गानेको जी चाहता है। अच्छा सुनो, गीतद्वारा हमारा परिचय!

गान

शुनो सइ परिचय मोदेर दितेछि।
कुलेर बाहिर हये कृष्ण अन्वेषणे एशेछि।
यमुनार कूले बसि, प्रेमचन्दन घसि-घसि
एइ देखो तिलक परेछि,
आर सकल अङ्गे कृष्णनाम लिखेछि।
हासि-काँदि, नाचि-गाइ, बने बने बूले बेड़ाइ
लोके बले पागल हयेछि।
कालो फूलेर माला गँथे सइ,
गले परेछि, आमरा प्रेमे मजेछि।*

नील०—तुम प्रेमसागरमें कैसे डूब गये हो! इतना प्रेम तुमने कहाँसे प्राप्त किया?

मुकुन्द—सुनो, हमारे मुँहसे गान ही निकलता है।

---

* (पद्यानुवाद) सुनो सखि! हम अपना परिचय देती हैं। हम श्रीकृष्णकी खोजमें अपने कुलोंको त्याग बाहर निकली हैं। हमने यमुना-तटपर प्रेम-चन्दन घिस-घिसकर, यह देखो, तिलक लगाये हैं और अपने सारे अङ्गोंपर कृष्ण-नाम लिख लिये हैं। हम सब (प्रेमके आवेशमें) हँसती-रोती हैं, नाचती-गाती हैं और इस प्रकार वन-वनमें घूमती हैं—यह देखकर लोग कहते हैं ये पागल हैं। हमने काले पुष्पोंसे मालाएँ गूँथकर कण्ठमें पहनी हैं और इस प्रकार हम पूर्णतः प्रेममें मतवाली हो रही हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गान

प्रेमेर पाथार नदीयाय[1][2],
गोराचाँदेर उदय।

एक दिन नय, दू दिन नय, नितूइ[3] मोदेर सुखेरि[5] पाथार[6]।
एँमन[7] सुन्दर ठाकुर कोर्था[8] वा ओछिलो[9]।
बहुभाग्ये बिधि आनि[10] मिलाइया[11] दिलो[12]।
राङ्गा पाये सोणार नूपुर नाचि नाचि जाय॥
गोलोकेर चन्द्र आजि भूतले उदय।
कत धार[13] धारि[14] तार बलिते ना जानि॥
गोरा गोरा गोरा गोरा पराणेर[15] पराणि[16]।

नील०—तुमलोग इतने आनन्दित क्यों हो ? तुमने क्या कृष्णको पा लिया है ? क्या तुमने कृष्णको देखा है ? कहो, कहो, तुम्हारे पैरों पड़ता हूँ। मैं मिथिलानगरीसे देखता-सुनता आ रहा हूँ।

मुकुन्द—(नाचते हुए)

गान

फूटिलो पिरीतेर फूल, ताइ, माजा नू आमादेर कुल।ध्रु०।
यमुनाय गीयाछिनू,
शेथा कुल भासाइनू,
गाखानि माजितेछिनू एका।

---

१. जलाशय। २. नवद्वीपमें। ३—६. हमलोग नित्य ही सुखसागरमें मग्न रहते हैं। ७. ऐसे। ८. कहाँ। ९. थे।

१०—१२. हमलोगोंके बीच ला मिलाये। १३-१४. उनके गुण हैं। १५. १६. प्राणोंके प्राण।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

माजिते माजिते अङ्ग
बिमल हइलो गो,
तबे तो श्याम आशि दिलेन देखा।
आमारे चाहिया श्याम
करुणाय बलिलो,
आँखिजले बूक भेशे जाय।
आमारे छाड़िये प्रिये
कत काल रबे गो,
आमि आछि तोर पथ चाइ।
एइ कथा काने गेलो,
हिया मोर बिदरिलो,
श्यामचाँदे सोंपिलाम काय।
श्याम से पराणधन
जीवनेर जीवन,
कृष्ण बलि नाचि आर गाइ।*

---

* (पद्यानुवाद) प्रेम-रूप पुष्पके विकसित हो जानेके कारण हमलोगोंने अपने कुलोंको परिमार्जित कर दिया है। मैं यमुनाजलमें अपने कुलको डुबाकर, अकेली अपने शरीरको निर्मल बना रही थी। माजते-माजते जब शरीर पवित्र हो गया, तब कृष्ण स्वयं दिखायी दिये। मुझे देखकर श्यामने अपने वक्षको अश्रुजलसे भिगोते हुए करुणा करके कहा—'प्रिये! मुझे छोड़कर कितने दिन अकेली रहोगी? मैं तुम्हारी प्रतीक्षा किये बैठा हुआ हूँ।' जैसे ही ये शब्द कानोंमें पहुँचे कि मेरा हृदय विदीर्ण हो गया और मैंने अपनेको श्रीकृष्णके अर्पण कर दिया। वे श्याम मेरे प्राणधन और जीवनके आश्रय हैं, उन्हींका नाम लेकर मैं नाचती और गाती हूँ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नील०—तुम्हारे आनन्दको देखकर मेरी यह क्या अवस्था हो गयी है। अरे, क्या मैं भी उस तरङ्गमें वह चला ?

न्याय०—क्यों रे श्रीधर ! मालूम होता है, अब तूने दोने-पत्ते बेचना छोड़ दिया है।

श्रीधर—छोड़ूँगा नहीं ? अब आश्रय जो मिल गया है ! किनारा मिल गया है, प्राणनाथ मिल गये हैं ! अपना धन पा गया हूँ; जिसका मैं स्वयं हूँ, उसे पा चुका हूँ, अब नाचूँगा नहीं ? यह देखो, नाचता हूँ ! (नृत्य)

न्याय०—'धन' क्या निमाई पण्डित ?

मुकुन्द—हाँ वही, जीवनके आश्रय !

(नेपथ्यमें 'चलो आर्य[1] तोरा[2] शीघ्र आय' कहते हुए शुक्लाम्बर ब्रह्मचारीका प्रवेश)

शुक्ला०—(अध्यापकोंसे) आपलोग यहाँ बैठे क्या कर रहे हैं ? (गदाधरादिको देखकर) तुम सब ! (मुकुन्द-गदाधरादिको गाढ़ आलिङ्गन कर) कैसा आनन्द ! (अध्यापकोंके प्रति) आप बैठे हैं ! चलिये, चलकर प्रभुको देखिये। आपलोग अपने शास्त्रोंको गङ्गामें वहा दीजिये।

न्याय०—ब्रह्मचारी ! तुम तो तपस्वी ब्राह्मण हो, तुम्हारी यह अवस्था क्यों ?

शुक्ला०—(गाते हुए)

---

१. आओ। २. तुमलोग।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गान

चले आय ओरे पुरबासीगन, सुखेर समाचार शोन ।
शुनि शचीर घरे आलो करे, शेइ श्रीनन्देर नन्दन ॥
जदि सत्य एशे थाकेन तिनि,
देखिबो केमन मुखखानि ।
नाचिबो गाइबो, काँदिबो हाँशिबो, चूमिबो शेइ श्रीचरन ।
फेलेदे तोदेर संसारेर काज
मिछे आर करिस ना ब्याज ।
कोन्दल करिबो, पूछिबो ताँहारे—जीवेर एतो दुख केनो ?
भेवे देखो मन आमार,
की प्रकाण्ड व्यापार,
कोटि कोटि-ब्रह्माण्डेश्वर
आज आमादेर भीतर ।
भाइ हरि बोलो सबे बदन भरे,
आनन्देर आर सीमा नाइ रे ।
दुःख नाइ, भय नाइ, पाप नाइ, ताप नाइ ।
बलरामेर आनन्द मन ।*

---

* (पद्यानुवाद) अरे नगरवासियो ! चले आओ, सुखसंवाद सुनो । सुना है, वही श्रीनन्दनन्दन कृष्ण इस बार शची देवीके घर प्रकाश फैला रहे हैं । यदि उनका आना सत्य है तो देखेंगे उनका श्रीमुख कैसा है ! हमलोग नाचेंगे-गायेंगे, रोयेंगे-हँसेंगे और उन श्रीचरणोंको चूमेंगे । तुमलोग अपने सांसारिक कामोंको छोड़ दो, व्यर्थ बहानेबाजी मत करो । हम झगड़ा करेंगे और उनसे पूछेंगे कि संसारके जीव इतने दुखी क्यों हैं ? अरे मन ! भलीभाँति सोच-विचारकर देख कि वह कैसी अद्भुत घटना है— कोटि-कोटि ब्रह्माण्डके नाथ आज हमलोगोंके बीच लीला कर रहे हैं । भाई ! सब मुक्तकण्ठसे हरि बोलो, आज आनन्दकी सीमा नहीं है । आज दुःख-भय पाप-ताप दूर हो जानेसे मन बड़ा आनन्दित है ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मैं आजन्म ब्रह्मचारी हूँ, मैंने पृथ्वीके सभी तीर्थोंके दर्शन किये, किंतु उन्हें न पाया; मनमें शान्ति भी न आयी। अब शुभ संवाद सुना कि जिन्हें अबतक खोजता रहा, वे श्रीधाम नवद्वीपमें सर्वनयनगोचर हो चुके हैं। उनके दर्शन किये, उन्हें प्राण समर्पण किये। अब अनुभव होता है कि मैं राजाकी संतान हूँ, राजराजेश्वरकी संतान हूँ। अनन्तकोटि-ब्रह्माण्डेश्वरकी संतान हूँ। हमारे पिता इतने संतान-वत्सल हैं कि अपनी अज्ञान-असहाय संतानको उपदेश-आदेश-आश्वासन देने स्वयं इस क्षुद्रतम जगत्में आये हैं। फिर क्यों न हम नाचें-गायें? क्या कहते हो मुकुन्द!

*न्याय*०—अच्छा ब्रह्मचारीजी! तुम पण्डित और सुबोध हो। तुम क्या यह विश्वास करते हो कि वही श्रीभगवान् इस धरापर अवतीर्ण हुए हैं?

*शुक्ला*०—क्यों, श्रीकृष्ण नहीं आये थे?

*न्याय*०—उस समयकी बात छोड़िये।

*शुक्ला*०—समझा, तुम नैयायिक पण्डित हो, श्रीकृष्णको अधिक नहीं मानते। तुम तो भगवान्‌को मानते हो और यह भी कि वे दयामय हैं?

*न्याय*०—हाँ, अवश्य मानता हूँ। सभी शास्त्र उन्हें दयामय कहते हैं, मेरा मन भी उन्हें दयामय मानता है।

*शुक्ला*०—नहीं, तुम सचमुच ऐसा नहीं मानते। हम कहते हैं कि वे दयामय हैं और विश्वास भी करते हैं कि वे जीवदुःखसे कातर होकर स्वयं उन्हें धैर्य देने आये हैं। यह तो सीधी बात है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तुम मुखसे कहते हो कि वे दयामय हैं, मनसे नहीं। तभी यह विश्वास नहीं करते कि वे पृथ्वीपर अवतरित हो सकते हैं।

*न्याय*०—निमाई पण्डित वही भगवान् हैं, यह आपने कैसे जाना ?

*शुक्ला*०—जाओ न एक बार, वही समझा देंगे। उनके सामने यह सब तर्क नहीं चलेगा। हमने समझा है, पूर्णरूपसे समझा है, नहीं समझते तो यह आनन्द कैसे पाते ? न समझते तो श्रीचरणोंपर जल-पुष्प-तुलसी चढ़ाकर उनकी पूजा क्यों करते ? अपनी इच्छासे क्या कोई किसी मनुष्यको भगवान् मान सकता है ? उन्होंने हमारे हृदयपर अधिकार कर अपनेको भगवान् कहलवा लिया है।

(नेपथ्यमें 'देखता हूँ, देखता हूँ' के शब्द, एक मुसल्मान दर्जीका प्रवेश।)

*दर्जी*०—देखा, देखा महाशय ! देखा, देखा !

(नृत्य)

*शुक्ला*०—यह देखो, यह भाग्यवान् दर्जीका कार्य करता है। एक दिन यह अपने व्यवसायके लिये श्रीवासके घर गया था, वहाँ प्रभुके दर्शन भी किये। प्रभुको यह किस रूपमें देखता है, पता नहीं; किंतु आज सात दिन हो गये—न आहार, न निद्रा। केवल 'देखा-देखा'—कहकर नृत्य करता सारे नगरमें घूम रहा है।

*न्याय*०—दर्जी ! तुमने क्या देखा ?

दर्जी—सारी नदिया नगरी टलमल कर रही है। देखते नहीं हो ? हिल रही है; यह देखो, सब हिल रहे हैं और बीचमें सुन्दर श्रीकृष्ण नाच रहे हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(२)

(अपने घरके आगे एक बालकके साथ श्रीनिमाई उपस्थित हैं। कुछ नागरिकोंका प्रवेश और प्रभुको प्रणाम। पीछे मुकुन्द-गदाधरका प्रवेश और प्रणाम)

प्र० ना०—(हाथ जोड़कर) प्रभु ! हम भवसागरमें पड़े चक्कर काट रहे हैं; श्रीचरणाश्रय देकर हमारा उद्धार कीजिये।

द्वि० ना०—प्रभु ! इस दीनपर आपकी बड़ी कृपा है, किंतु मुझ-सा अस्पृश्य पामर जीव त्रिलोकमें भी अन्य नहीं मिलेगा। मैंने जान लिया है, हमारे उद्धारार्थ ही आप इस धरापर आये हैं।

प्र० ना०—यह ठीक ही कहा, साधु पुरुषोंसे आपका क्या प्रयोजन ? जो रोगी है, वही चिकित्सककी शरण लेता है। हम सब भवरोगसे पीड़ित हैं, अतः हमें इस व्याधिसे मुक्त कीजिये।

निमाई—तुम सब ऐसी दीनता मत दिखाओ। तुम्हारा दैन्य देखकर मेरा हृदय विदीर्ण हो जाता है। श्रीकृष्ण कृपामय हैं, वे सभीका उद्धार करेंगे।

बालक—प्रभो ! आप बालक समझकर मेरी उपेक्षा न कीजिये। मरण वृद्धका भी है और बालकका भी ! यह देखिये, पिताजी क्रोधमें भरे आ रहे हैं।

(बालकके पिताका प्रवेश)

पिता—(पुत्रके प्रति) क्यों रे, तू पाठ छोड़कर यहाँ आ बैठा ? दो दिनसे तेरा पता नहीं है; चल, घर चल, वहाँ तेरी पीठपर भादोंकी वर्षा होगी।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बालक—पिताजी ! क्षमा हो, मैं प्रभुको पा चुका हूँ; यहीं मेरा अध्ययन समाप्त है, यहीं मेरा सांसारिक जीवन भी समाप्त है ।

पिता—ढिठाई छोड़कर मेरे साथ चल । (निमाईके प्रति) निमाई पण्डित ! तुमने मेरे बच्चेको क्यों फुसला रक्खा है ?

प्र० ना०—आपका बच्चा यहाँ स्वयं आया है, आप उसे ले जाइये ।

पिता—स्वयं तो आया ही है । निमाई पण्डित ! तुमने मेरे बच्चेको अवाध्य कर दिया है । वह मेरे सामने कभी आँख उठाकर बात नहीं करता था । मेरे बच्चेको दे दो, अन्यथा भला न होगा ।

बालक—(निमाईके पैर पकड़कर) प्रभु ! मेरे पिता आपको जानते नहीं हैं, तभी कटु वाक्य कह रहे हैं, उन्हें क्षमा कीजिये ।

पिता—जानता नहीं, ऐं ! खूब जानता हूँ । निमाई तो जगन्नाथका बेटा है । हमने नगरमें निर्णय किया है कि इस पाखण्डीको दण्ड देंगे ।

बालक—पिताजी ! क्या कहते हो ? (पिताके चरणोंमें पतन) तुम जिन्हें दण्ड देना चाहते हो, वे पूर्णब्रह्म सनातन हैं । वे मेरे पिता, तुम्हारे पिता, जगत्के पिता हैं । (निमाईके पैर पकड़कर) प्रभु ! पिताजी आपको ठीक नहीं जानते, तभी ऐसे दुर्वाक्य उनके मुखसे निकल रहे हैं । मैं आपको अपना चित्त समर्पित कर चुका हूँ, मुझपर कृपाकर इनको क्षमा कीजिये और अपना यथार्थ परिचय दीजिये ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पिता—तेरे प्रभुका परिचय तो मैंने दे दिया, दरिद्र जगन्नाथका छोकरा। मेरा नाम है अग्निशर्मा! मुझे नगरमें सभी जानते हैं। अरे निमाई, पाखंडी, बालकचोर! तू ठाकुर बन बैठा है। तुझपर प्रहार करूँ तो क्या करेगा।

निमाई—(सहास्य) अच्छा, तुम एक बार हरि बोलो, फिर जितना चाहो, प्रहार करना।

बालक—(रोते हुए प्रभुके चरणोंमें गिरकर) मेरे पिताका सर्वनाश हुआ! प्रभु! क्षमा कीजिये, आपके पैरों पड़ता हूँ। पिताको क्षमा कर अपना यथार्थ स्वरूप बताइये।

पिता—(क्रोधमें काँपते हुए) मैं आज ही तेरा पाखंडपन नष्ट करूँगा निमाई! देखूँ, कौन तेरी रक्षा करता है? (लाठी उठाकर मारनेके लिये उद्यत)

निमाई—(हाथ उठाकर) श्रीकृष्ण तुमपर कृपा करें तुम ब्राह्मण हो, तुम्हारा हृदय तो स्वभावतः निर्मल होना चाहिये; उसमें मलिनता कैसे आ गयी? मेरे वरदानसे तुम्हें भक्ति मिले।

(ब्राह्मणका दृढ़तासे खड़े रहना, पश्चात् उसके शरीरमें कम्प, मुखमें अर्द्धस्फुट स्वर, तत्पश्चात् मूर्छा और पतन।)

प्र० ना०—आहा, मूर्छित हो गये, कानमें श्रीकृष्ण-नाम सुनाओ।

कानोंमें उच्चस्वरसे श्रीकृष्णनामोच्चारण; ब्राह्मणका पृथ्वीपर लोट-पोट करना और बार-बार कृष्ण-कृष्ण कहते हुए उठकर निमाईके पैरोंमें गिरना।)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पिता—प्रभु ! इसीसे दयाके ठाकुर कहाते हैं। जगाई-मधाई आपको मारनेको उद्यत हुए, पर उन्होंने आपकी कृपा प्राप्त की। उसी प्रकार मुझे भी कृपा मिली। मैं सदाका गँवार हूँ। मेरे पुत्रने शुभ क्षणमें जन्म लिया था, शुभ क्षणमें उसने आपको पहचाना; मैं भी शुभ क्षणमें उसे खोजने निकला और शुभ क्षण ही मेरे ऊपर शनिश्चर आया था, जिससे आपपर मैंने प्रहार करना चाहा।

निमाई—(लड़केके प्रति) अब तुम अपने परमभक्त पिताके साथ घर जाओ। अध्ययन भी करते रहो और श्रीकृष्ण-भजन भी !

बालक—मेरी माँका उद्धार कैसे होगा ?

द्वि० ना०—अपनी माँका भार तुम दोनों ग्रहण करो। प्रभुको विश्राम करने दो।

प्र० ना०—पतितपावन ! हमारी क्या गति होगी ?

निमाई—तुम घर जाओ; कृष्ण-कीर्तन करो। स्वयं करो और दूसरोंको प्रेरित करो। इस प्रकार तुम यदि एक भी व्यक्तिको भक्ति-पथपर ला सके तो कृष्णको खरीद लोगे।

(नागरिक गान करते हैं)

गान

नदेर[1] चाँदेर उदय हयेछे[2]।
की[3] आनन्दे नदे भासिछे[5]।
पापी-तापी, अन्ध-आतुर सारि-सारि[6] आसिछे[7]।

---

१ नवद्वीपके। २ हुआ है। ३—५ किस आनन्दमें नवद्वीप बह रहा है। ६ एक-एक कर। ७ आ रहे हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(सभीका प्रणाम कर गाते हुए प्रस्थान)

(हरिदासके साथ अवधूत श्रीनिताईका प्रवेश)

निताई—(निमाईकी ओर अँगुली करके नृत्य करते हुए गान)

भजो गौराङ्ग, कहो गौराङ्ग, लहो गौराङ्गेर नाम रे ।
जे भजे गौराङ्ग-चाँद, सेई[1] आमार[2] प्राण रे ।
दिनान्ते जे गौर नाम लय एकबार,
आमि तारँ[3] चिरदिन, शे हलँ[4] आमार ।

निमाई—(उठकर) श्रीपाद ! शान्त हों ।

निताई—(पूर्ववत्)

भजो गौराङ्ग, कहो गौराङ्ग,
लहो गौराङ्गेर नाम रे !

निमाई—श्रीपाद ! शान्त हों ।

(निताईका कुछ स्थिर होना)

हरिदास—हरिनाम-प्रचारके लिये जानेके समयसे अबतक श्रीपाद विह्वल ही रहे हैं । इसी प्रकार बिल्कुल बाह्यज्ञानशून्य होकर नगर-नगर, घर-घर और प्रत्येक व्यक्तिको उपदेश करते आ रहे हैं । प्रभु ! देखिये कैसा रहस्य है ? आपको पहचान न सकनेके कारण आपका भजन करनेके लिये आपको ही उपदेश कर रहे हैं ।

निताई—(प्रभुसे चिपटकर)

भजो गौराङ्ग, कहो गौराङ्ग,
लहो गौराङ्गेर नाम रे ! (नृत्य)

१-२ वही मेरा । ३ उसका । ४ हो जाता है ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निमाई—यह उपदेश मेरे लिये नहीं है। अपना भजन स्वयं करनेके लिये तो अन्य जीव ही बहुत हैं। श्रीपाद ! विनती करता हूँ, शान्त हों।

(निताईकी निपट वाह्यावस्था)

निताई—(हाहा हास्य करते हुए) ये तो प्रभु हैं। पहचान नहीं सका। मैंने समझा——आप भी मुझ-जैसे एक संसार-दावानल-दग्ध जीव हैं।

निमाई—शान्त हों, श्रीपाद ! आओ सब बैठें। (सभीका उपवेशन) आपसे मुझे कुछ विशेष परामर्श करना है।

निताई—आज्ञा कीजिये।

निमाई—श्रीपाद ! जीवोंकी क्रमशः क्या दुर्दशा हो रही है देखते हो ? उनकी अवस्था सोचते ही मेरा हृदय विदीर्ण हुआ जाता है। सभी जीव असार विषयोंमें मत्त हैं। कुछ दिनों बाद मरना पड़ेगा, यह जानते हैं, किंतु जानकर भी नहीं जानते। श्रीपाद ! तुम मेरे दुःखसे दुखी हो, तभी तुमसे कहता हूँ।

निताई—प्रभु ! जब आप पृथ्वीपर आ चुके हैं, तब जीवोंके लिये और क्या चिन्ता है ?

निमाई—श्रीपाद ! मुझसे और जीवोद्धार नहीं होता। नगरमें क्या परामर्श हो रहा है, सुना है ? नगर-निवासी मुझपर प्रहार करेंगे।

निताई—(कानोंपर हाथ रखकर) प्रभु ! ऐसी बात मत कहो। ऐसी बात सुननेसे भी नरक भोगना पड़ता है। आपको

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जो मारना चाह रहे हैं, वे पशु हैं। ओह ! उनकी क्या गति होगी ?

निमाई—इसमें उनका क्या अपराध है ? अपराध तो मेरा है।

निताई—यही कि गोलोक छोड़ इस मलिन दुःखमय धरा-धामपर आये हैं, क्यों ? जीवोंके मङ्गलके लिये ! आप उन्हें दुखी नहीं देख सकते, उन्हें देख पुत्रशोकातुरकी भाँति व्याकुल होकर रोदन करते हैं; यही आपका बड़ा अपराध है !

निमाई—नगरवासियोंका क्या दोष है ? मैं हरिनाम वितरण करना चाहता हूँ, पर मनुष्य देखते हैं—मेरे अच्छे-अच्छे वस्त्र, कण्ठमें स्वर्णहार और आहारमें दुग्ध, दधि, मक्खन ! तभी तो सब मेरे ऊपर क्रोध करते हैं और तभी उनमें मुझसे हरिनाम लेनेकी इच्छा नहीं होती।

निताई—क्यों, दूध-दही खानेसे क्या कोई पतित हो जाता है ?

निमाई—ऐसी बात नहीं है, किंतु जीवोंकी धारणा तो ऐसी ही है। जो व्यक्ति गार्हस्थ्य-सुखोंमें सुखी है, उससे मनुष्य धर्म-शिक्षा लेना नहीं चाहते। श्रीपाद ! मैं संन्यासी बनूँगा और जिन्होंने मुझे मारना चाहा है, उनके आगे दौड़कर उनसे हरिनामकी भिक्षा लूँगा।

निताई—प्रभु ! यह आपका कैसा विचार है ?

निमाई—हाँ, दृढ़ संकल्प !

निताई—प्रभु ! इस संकल्पका त्याग करो। संन्यासी बनकर भी तो आप हमसे पीछा न छुड़ा सकेंगे। आप जहाँ जायँगे, वहीं हम जायँगे; किंतु माँके विषयमें क्या सोचा है ? उनकी बहत्तर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वर्षकी अवस्था हो चुकी है, आपको छोड़कर उनका और कोई नहीं है।

निमाई—माँके दुःखी होनेसे क्या जीवोद्धार नहीं होगा ? मेरी माँ दयामयी हैं। तुम देखना, वह स्वयं मुझे संन्यासी होनेकी आज्ञा देंगी। जिन्होंने मुझे मारना चाहा है, उनके पास जब फटे-पुराने वस्त्र पहनकर, कौपीन धारणकर जाऊँगा और कहूँगा—'यह आया हूँ, मुझपर प्रहार करो' तब मेरी अवस्था देखकर वे स्वयं ही मुझपर प्रहार नहीं करेंगे। यही क्यों, उस अवस्थामें जिससे मैं हरिनाम लेनेको कहूँगा, वही ग्रहण करेगा।

निताई—प्रभु ! इतनी निष्ठुरता न दिखाओ। यदि तुम संन्यासी हो जाओगे तो माँ वियोगमें मर जायँगी; विष्णुप्रिया देवी मरेंगी और आपके भक्त भी उन्हींके साथ-साथ मर जायँगे।

निमाई—श्रीपाद ! यह तो मैं जानता हूँ कि मेरी वृद्धा जननी ही मेरा कण्टक है, किंतु जो भी हो, अब घरमें रहना नहीं हो सकेगा। श्रीकृष्ण मेरा चित्त चुरा ले गये हैं, मैं उनकी खोजमें श्रीवृन्दावन जाऊँगा।

हरिदास—प्रभु ! क्या कहते हैं ! जहाँ आप हैं, वही वृन्दावन है। आप गृह-त्याग करेंगे, यह सुनकर कोई न बचेगा।

निमाई—तुम समझते नहीं हो। माँको कंगालिनी बनाकर और तुम-जैसे बन्धु-बान्धवोंको त्यागकर मैं चला जाता हूँ, यह क्या मेरी स्वयंकी इच्छा है ? घर रहनेकी बात सोचते ही मेरा हृदय

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विदीर्ण हो जाता है। श्रीपाद ! मेरे अपने और बन्धुओंके दुःखको न देखो, जीवोंका दुःख देखो। (ऊपरकी ओर देखकर) हे श्रीकृष्ण ! मुझपर कृपा करो; तुम्हें छोड़कर मैं नहीं बचूँगा। तुम मेरे प्राणोंके प्राण हो। (निताईके प्रति) जनसाधारणको तो ज्वर आता है, किंतु मुझे श्रीकृष्ण-विरह-ज्वर है। मेरे प्रति यदि तुमलोगोंकी कुछ भी मोह-ममता है तो मुझे छोड़ दो; मैं एक दौड़में वृन्दावन जाऊँगा। वहाँ पहुँचकर श्रीकृष्ण-दर्शन कर प्राणोंको शीतल करूँगा।

गदाधर—प्रभु ! मैं आपसे साहस कर मुख उठाकर बात नहीं कर सकता था, किंतु अब मुझे भय नहीं रहा। आप यदि जायँगे तो माँ आदि सभीके प्राण भी चले जायँगे। प्रभु ! आप तो जीवोंको भक्ति-शिक्षा देनेके लिये अवतीर्ण हुए हैं ! वृद्धा जननीको दुःख देना क्या धर्म है ? नहीं, ऐसा करनेसे तो सभी धर्म नष्ट होते हैं। यदि आप जायँगे तो मातृ-वधके दायी होंगे।

निमाई—गदाधर ! तुम्हारी बातोंमें विष मिला हुआ है, तुम मेरे हृदयमें वेदना उत्पन्न करते हो। मेरे जानेमें प्रधान कण्टक हैं माँ। तुम्हें चाहिये कि मुझे किसी प्रकार इस बाधासे पार करा दो, परंतु तुम उलटे मेरी बाधा बढ़ाते हो। यह क्या सुहृद्का कार्य है ? तुम क्या जानते नहीं ? मैं स्वेच्छासे नहीं जा रहा हूँ। हे प्राणाधिक सुहृद्गग ! प्रिय बन्धुकी भाँति कार्य करो, जिससे मेरा जाना हो सके। श्रीकृष्ग ! मैं नितान्त निष्ठुर हूँ, तभी तुम्हें भुलाकर यहाँ पड़ा हुआ हूँ। हे श्रीकृष्ण ! मुझे पकड़ो, पकड़ो, पकड़ो ! (हाथ उठाना) मैं तुम्हारे पास आऊँगा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(मूर्च्छित होकर भूमिपर पतन)

निताई—क्या हुआ, क्या हुआ ?

(सभीका व्यस्त होना, वस्त्रद्वारा हवा करना तथा निताईद्वारा निमाईके कर्णोंमें उच्चस्वरसे कृष्ण-नाम उच्चारण करना)

निताई—(उच्चस्वरसे) प्रभु, प्रभु, प्रभु !

निमाई—(चैतन्य होकर धूलमें लोट-पोट तथा रुदन करते हुए) श्रीकृष्ण ! तुम कहाँ हो ? मैं अब नहीं बचूँगा, मेरे प्राण जा रहे हैं। हा नाथ ! तुम कब आओगे ? तुम क्या मेरे प्राण जानेपर आओगे ? मुझे पकड़ो, मैं उठूँगा। (गदाधरद्वारा पकड़ना, उठकर गदाधरका गला पकड़कर) गदाधर ! क्या तुमने मेरे कृष्णको इधर कहीं देखा ? वे किस मार्गसे चले गये ? गदाधर ! मेरे कृष्णको बुला दो, मेरी प्राण-रक्षा करो।

गदाधर—श्रीकृष्ण आपके हृदयमें हैं।

निमाई—क्या कहा ! हृदयमें हैं ! तब फिर जायँगे कहाँ ? (नखोंसे हृदय चीरनेको उद्यत; गदाधरद्वारा हाथ पकड़ना)

गदाधर—(रोते हुए) यह क्या हुआ ? नखाघातसे रक्तपात !

(वस्त्रसे रक्त पोंछना)

निमाई—श्रीकृष्ण ! तुम्हें छोड़कर क्या मैं रह सकता हूँ ? मेरे बन्धु पागल हैं, तभी वे मुझसे रहनेको कहते हैं। इस यज्ञोपवीतने मुझे संसारी बनाया है, दूर हो (यज्ञोपवीत खण्ड-खण्ड करना) मैं अब श्रीवृन्दावन चला। (उठकर गमनोद्यत, निताईद्वारा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भुजाएँ फैलाकर रोकना; निमाईका मूर्च्छित होकर निताईके ऊपर गिरना)

हरिदास—आज हमें प्रभु किस प्रकार छोड़कर चले गये ?

निताई—(निमाईके कर्णोंमें हरिनाम सुनाकर) प्रभु ! जीवोंपर आपकी दया है, किंतु हमें छोड़कर जा रहे हैं, क्या हम जीव नहीं हैं ?

(निमाईको चैतन्य-लाभ, कृष्ण-कृष्ण कहकर पृथ्वीपर लोट-पोट होना एवं रुदन करना, निताईके द्वारा प्रभुको उठाया जाना, प्रभुका दोनों पैर फैला गदाधरके शरीरका आश्रय लेकर बैठना)

निमाई—बन्धुगण ! मेरे पास आओ। (हाथ जोड़कर) मैं प्रार्थना करता हूँ, मुझे विदा दो।

हरिदास—(रोते हुए प्रभुके पैर पकड़कर) प्रभु ! आप सभीके प्राण हैं, आपके जानेसे कोई नहीं बचेगा।

मुकुन्द—(उच्चस्वरसे रोते हुए) प्रभु ! आप चले जायँ, यह क्या हो सकता है ? आप हमारे प्राणोंके प्राण हैं। आप जायँगे, इसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते। (पैर पकड़कर) प्रभु ! जननीको मत छोड़िये, वे मर जायँगी।

निमाई—तुमलोग शान्त होओ। मैं तुरंत नहीं जा रहा हूँ। अभी फिर बात होगी।

निताई—(गदाधरसे) चलो, प्रभुको स्नान कराने ले चलो। प्रभु ! समय अधिक हो चुका है, स्नान करने चलिये।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(सभीका प्रस्थान)

(३)

(अन्तःपुरमें शची और ईशानमें वार्तालाप)

शची—ईशान ! देखना निमाई सचेत तो है। यदि सचेत हो तो एक बार बुला लाओ ।

(ईशानका प्रस्थान, निमाईका प्रवेश)

निमाई—(माँके चरणोंमें साष्टाङ्ग प्रणाम कर) माँ, मुझे बुलाया था ?

शची—हाँ, बैठ । (निमाईका उपवेशन) बेटा ! मैं सुनती हूँ ।

निमाई—क्या माँ !

शची—जो सुना है, वह मुँहपर नहीं आता । सुननेके साथ ही मेरा मुख फीका पड़ गया है और कलेजा सूख गया है । तू क्या मुझे छोड़ जायगा ?

निमाई—हाँ माँ, मैं किसी अन्य स्थानमें श्रीकृष्ण और कृष्ण-प्रेम खोजने जाऊँगा । किंतु, माँ ! तुम दुखी क्यों हो ? मैं फिर आऊँगा ।

शची—सो नहीं ! तुम तो वही करने जा रहे हो न ! जो तुम्हारे भाई विश्वरूपने किया था ?

निमाई—(नतमस्तकसे) हाँ माँ, वही । फिर भी मैं तुम्हें फिर दिखायी दूँगा ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शची—बार-बार यही विश्वास दिलाते हो! मुझे पुनः दिखायी दोगे, किंतु तुम वह होकर, वह-वह, मैं उसका नाम नहीं ले सकती, तुम कौपीन पहनोगे, द्वार-द्वारपर भिक्षा माँगकर खाओगे! अच्छा निमाई! मैं बड़ी कठोर हूँ, यह मैं जानती हूँ। आठ कन्याएँ मर गयीं, विश्वरूप-जैसा पुत्र संन्यासी हो गया, फिर भी मैं बची हुई हूँ। यह सब कौन-सी माँ सह सकती है? हाँ तो, निमाई, तू मुझे छोड़कर संन्यासी होगा न?

निमाई—माँ, माँ, क्या कहूँ? कुछ समझमें नहीं आता, माँ!

शची—घरमें युवती वधू है, दूसरेकी कन्या; बता, उसे क्या कहकर समझाऊँगी?

निमाई—माँ, तुम्हें कष्ट होता है, तभी तो अबतक नहीं जा सका था और अब भी नहीं जा सकता।

शची—तू जायेगा और मैं मरूँगी। किंतु बहूकी अवस्था तो अभी चौदह वर्षकी ही है, वह कबतक वियोगमें बची रहेगी; कुछ ठीक नहीं! वह बेचारी क्या करेगी, बता।

निमाई—माँ, तुम मेरी बातका तो विश्वास करती हो? सच कहता हूँ, तुमने जिस प्रकार मेरा पालन-पोषण किया है, वैसा कोई भी माँ नहीं कर सकती। पिताजी स्वर्ग सिधार गये; तुमने लालन-पालन कर अध्ययन कराया; फिर भी मैं तुम्हें छोड़ जाऊँ, यह क्या मेरी स्वेच्छासे हो सकता है? माँ, मैं अपने वश नहीं हूँ। माँ! मैं घर रहूँ, जब भी यह बात सोचता हूँ, तभी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मेरा हृदय विदीर्ण हो जाता है। माँ, न जाने कौन मुझे खींचे लिये जा रहा है। मैं अपने वशमें नहीं हूँ। मुझे श्रीकृष्ण ले जा रहे हैं, मैं स्वेच्छासे नहीं जा रहा हूँ।

शची—बेटा ! मातृवध न कर; पाप लगेगा। दूसरेकी पुत्री—विष्णुप्रिया, उसे भी बिना दोष त्यागनेसे पाप लगेगा। बेटा ! तू विश्वविजयी भक्त है, तू ऐसा कार्य क्यों करता है ? ऐसा करनेसे धर्म सधता नहीं, नष्ट होता है।

निमाई—माँ, श्रीकृष्ण ही मिलाते हैं, वही अलग करते हैं। उनकी जो इच्छा होती है, वही होता है। तुम्हारी और मेरी चेष्टाएँ वैसे ही व्यर्थ हैं, जैसे एक पशुका भ्रम ! माँ, श्रीकृष्ण-भजन ही जीवका परम पुरुषार्थ है, और सभी कर्म व्यर्थ हैं। माँ, मैं जो करने जा रहा हूँ, उससे मेरा भला होगा। तुम मुझे निःस्वार्थ प्रेम करती हो, माँ ! तुम सामान्य माया-मुग्ध जीवकी भाँति मेरे इस महत्कार्यमें बाधा मत दो। मेरा भला होनेसे तुम्हारा भी भला होगा।

शची—बेटा ! मैं तेरी बात कभी नहीं टालती। तू जो कहेगा, यदि मेरा वश चला तो वही करूँगी। बोल, मैं क्या करूँ ?

निमाई—माँ, मुझे सरल मनसे विदा दो। मैं यदि तुम्हें दुःख देकर जाऊँगा तो मेरा धर्म नष्ट होगा।

शची—विदा दे सकती हूँ और दी, किंतु सरल मनसे नहीं। मैं माँ हूँ, मेरा और कोई नहीं है। तू मुझसे जो करनेकी कहता है, वह और कोई माँ नहीं कर सकती।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निमाई—माँ, तो मेरा जाना नहीं हुआ। मैंने श्रीकृष्णको नहीं पाया। माँ, जननी, तुम मुझे स्नेहवश नहीं जाने देतीं। मैं तुम्हारे इस स्नेहसे प्रार्थना करता हूँ। मेरे मनका सुख, चिरदिनका मङ्गल—मेरा और सभीका, यहाँतक कि जीवमात्रका जिससे मङ्गल हो, स्नेहमयी! तुम मुझे वही करने दो।

शची—तो तू जायगा, सचमुच जायगा, तो जा! पर तुझे एक बार गोदमें लेकर जन्मभरके लिये मुख देख लूँ! (निमाईका मुख-चुम्बन और मूर्छा)

निमाई—क्या हुआ, यह क्या हुआ! (माँको गोदमें लेकर) माँ! उठो, मैं नहीं जाऊँगा। माँ! तुम्हारा वध करके मैं नहीं जाऊँगा। श्रीकृष्ण! कृपामय! मेरी वृद्धा जननीको शान्ति दो।

(शचीके कर्णोंमें कृष्णनामोच्चारण, शचीको चैतन्य-लाभ)

शची—निमाई, अरे निमाई! (क्रन्दन) कृष्ण कृपामय! मैं कैसे इस सूने घरमें रहूँगी? जिस निमाईको एक क्षण न देखनेपर मृतक-सी हो जाती हूँ, उसके चिरवियोगमें कैसे दिन-रात विताऊँगी? नहीं, मैंने ठीक नहीं कहा। मैं अपने विषयमें सोचती हूँ; निमाईके विषयमें, सर्वोपरि विष्णुप्रियाके विषयमें नहीं सोचती। निमाई तो मेरी मक्खनकी पुतली है, वह किस प्रकार वृक्षोंके नीचे पृथ्वीपर सोयेगा, कैसे वह अपने कमल-से सुकोमल पैरोंसे वन-यात्रा करेगा? वह भिक्षा माँगकर खायेगा! कौपीन पहनकर द्वार-द्वार घूमेगा। उसे कौन रसोई बनाकर भोजन करायेगा? मेरा निमाई रात-दिन कृष्णनाममें विभोर रहता है, उसे सचेत

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

करके कौन खिलायेगा ? और मैं अपनी लक्ष्मी-सी बहूको क्या कहकर समझाऊँगी ? मेरी बहू रात-दिन आग-सी जलेगी। हे अगतिके गति श्रीकृष्ण ! गति दो।

निमाई—शान्त होओ माँ, मैं नहीं जाऊँगा।

शची—नहीं बेटा ! मैं यह नहीं कह सकती। जब तू कहता है कि तुझे श्रीकृष्ण ले जा रहे हैं और जानेमें तुझे सुख है—जगत्का मङ्गल है तथा न जानेमें तुझे दुःख और जगत्का अनिष्ट है, तो मैं तेरे जानेमें बाधा नहीं दे सकती। तू स्वच्छन्द जा, पर मेरा हृदय फट जायगा; उसका क्या होगा ?

निमाई—माँ, एक कथा सुनो। एक ब्राह्मण-दम्पति, यह सोचकर कि अपने पुत्रको राक्षसकी भेंट करना पड़ेगा, रो रहे थे। उसी घरमें वनवासके समय कुन्तीदेवी अपने पाँचों पुत्रोंके साथ रहती थीं। कुन्तीदेवीने उस दम्पतिका दुःख देखकर अपने पुत्र भीमको उनके पुत्रके बदले राक्षसकी भेंटमें भेज दिया था। माँ ! कुन्तीदेवी जगत्में इसीलिये धन्य हैं। मैं एक महान् उद्देश्य लेकर जा रहा हूँ। माँ, जीव हाहाकार कर रहे हैं, उनका दुःख दूर करने श्रीकृष्णसे उनका परिचय कराने मैं जा रहा हूँ। माँ, मेरा वध करके भी यदि उनका मङ्गल होता हो तो क्या तुम यह कार्य नहीं करोगी ? माँ, मैं तुमसे तो अपने वध करनेकी भी नहीं कहता। माँ ! मैं जाऊँगा और पुनः आऊँगा तुमसे प्रतिज्ञा करता हूँ।

शची—तुम मुझे तो समझाते हो, पर उस बालिका विष्णुप्रियाको क्या कहकर समझाओगे ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निमाई—वह स्वच्छन्द मनसे विदा देगी ।

शची—यह हो सकता है; क्योंकि इस समय पूरा नवद्वीप एक और ही प्रकारका हो रहा है । सभी श्रीकृष्णनाममें मत्त हैं, संसारसे उदासीन हैं । फिर भी, बहू तुझे स्वेच्छासे छोड़ देगी, यह नहीं हो सकता ।

निमाई—यदि उसका मेरे प्रति यथार्थ स्नेह है तो उसे समझानेमें क्या कठिनाई है ? मैंने उसे एक प्रकारसे समझाया है । मैंने कहा——'साध्वी ! तुम मुझे चाहती हो, मैं तुम्हें चाहता हूँ । तुम रहोगी, मैं भी रहूँगा; मनका मिलन वैसे ही रहेगा, फिर इससे अधिक और क्या चाहती हो ? संसार-त्यागसे मेरा मङ्गल होगा, ऐसे कार्यमें अपने कायिक सुखके लिये क्या तुम बाधा दोगी ?' उसने स्वच्छन्द कहा——'नहीं !' अब माँ, मेरा एक निवेदन है, गृहत्यागके बाद उससे मेरा सम्बन्ध लोप हो जायगा; तुम एक कार्य करना, उसे श्रीकृष्ण-नामकी शिक्षा देना ।

शची—क्या तेरी गृहिणीको मुझे देनी होगी——कृष्ण-नाम-शिक्षा ? बेटा ! उससे तेरा सम्बन्ध टूट जायगा ? क्या मुझसे भी ....? अरे निमाई ! क्या तू मुझे फिर माँ कहकर नहीं पुकारेगा ?

निमाई—शास्त्रमतके अनुसार तो ऐसा नहीं कहना चाहिये, किंतु मैं कहूँगा । तुम इहकाल-परकाल दोनों कालमें मेरी माँ रहोगी । मैं सत्य-सत्य कहता हूँ ।

शची—तो एक बात मान । तू कुछ समय ठहर, मैं तुझे प्राणभरके देख लूँ और भोजन बनाकर खिला दूँ ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निमाई—जो आज्ञा माँ! (दोनोंका प्रस्थान)

तृतीय अङ्क

(१)

(निमाईका घर; निताई, शची और निमाई बैठे हैं। नेपथ्यमें 'हरिबोल' ध्वनि; कुछ भक्तोंका प्रवेश और गान)

गान

प्रभु दयाल, आमि साधुमुखे शुनेछि।[1]
अकुल पथारे पड़े डाक्‌तेछि।[2]
अस्पृश्य पामर आमि,
दयाँर[3] ठाकुर तुमि,
अगतिर गति प्रभु मने जेनेछि।[4]
करिते[5] पतितोद्धार; एबार[6] नदेयँ[7] अवतार,
आमार[8] समान प्रभु पतित कोथा[9] पाबे[10] आर[11]।
तुमि दिये[12] चरणतरी,[13] उठाओ हे केशे[14] धरि,[15]
आमि आशा करिये चेये रयेछि।[16]

(भक्तोंका प्रभुको प्रणाम और हाथ जोड़कर आगे खड़े होना)

निताई—प्रभु! इस समय बहुत-से लोग नगर छोड़कर आपके दर्शन करने चले आ रहे हैं।

---

१. मैंने संतपुरुषोंसे सुना है कि प्रभु बड़े दयालु हैं। २. मैं तटहीन जलाशयमें पड़ा हुआ पुकार रहा हूँ। ३. दयाके। ४. मैंने मनमें जान लिया है कि प्रभु अगतिके गति हैं। ५. करने। ६. ७. इस बार नवद्वीपमें। ८. मेरे। ९–११. और कहाँ पायेंगे। १२. देकर। १३. चरणरूप नौका। १४-१५. केश पकड़कर। १६. मैं आशा लगाये बैठा हूँ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निमाई—(स्वगत) क्योंकि इस समय मैं विदा होने जा रहा हूँ ।

निताई—प्रभु ! क्या कहा, समझा नहीं ?

निमाई—(भक्तोंके प्रति) तुम सभीकी श्रीकृष्णमें रति-मति हो ।

प्रथम भक्त—प्रभु ! आज्ञा दीजिये, यह पुष्पमाल आपके गलेमें पहना दूँ ?

निमाई—आओ, आओ । (निमाईद्वारा अपने गलेकी माला भक्तके गलेमें डाल देना तथा भक्तके द्वारा नयी माला प्रभुको पहनाना और प्रणाम करना ।)

द्वि० भ०—थोड़ी-सी दूधकी मलाई लाया हूँ, प्रभु स्वीकार कर मेरी गोष्ठीका उद्धार कीजिये । (मलाईका पात्र रखकर प्रणाम करना)

तृ० भ०—मैं थोड़ा-सा दूध लाया हूँ । प्रभु ! लीजिये । मेरे कुलका उद्धार कीजिये । (दुग्ध-पात्र रखकर प्रणाम)

च० भ०—मैं किंचित् मक्खन लाया हूँ, ग्रहण कीजिये । (मक्खन रखकर प्रणाम) प्रभु ! हम भव-सागरसे पार होंगे, उपाय बताइये ।

निमाई—तुमलोग 'हरिनाम' लो । दस-पाँच व्यक्ति मिलकर कीर्तन करो, नहीं, माता-पिता-पुत्र, भाई-बहन आदिके साथ ही कीर्तन करो । मृदङ्ग-करताल न हों, तो हाथसे ताली बजाकर ही करो । हरिनामके लिये कोई नियम नहीं है । शुचि, अशुचि, दिन-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रात किसीका भी नियम नहीं है। हरिनाम प्रत्येक अवस्थामें प्रत्येक समय लिया जा सकता है।

सभी भक्त—जय शचीनन्दन ! जय पतितपावन ! जय अनाथ-नाथ !

निमाई—तुम जितना कर सको, हरिनाम जप करो। नाम यह है—

'हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे ॥'

(कोई भक्त गान करता है)

गान

जय शचीनन्दन !
करुणा करिये दासे करो हे स्मरण।
तुमि आमार, आमि तोमार,
भुलिल मोर मन।
तव वदन-कमल, परिमले टलमल,
कोटि इन्दु सुशीतल, भुवन उज्ज्वल,
देहि चरण-कमल-मधु-पान।
तव वदन-चन्द्रमा, शारद पूर्णिमा,
छार चाँद कि उपमा, बलरामे दाओ हे क्षमा,
देहि देहि भक्ति-दान।*

---

* (पद्यानुवाद) हे श्रीशचीनन्दन ! आपकी जय हो। मैं यह भूल गया हूँ कि आप मेरे हैं और मैं आपका हूँ। कृपाकर इस दासको स्मरण करते रहिये। आपका मुख-कमल सुगन्धसे परिपूर्ण है, वह करोड़ों चन्द्रोंके समान सुशीतल है तथा उससे समस्त विश्व प्रकाशित होता है। कृपाकर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(गानके समय प्रभुका लज्जित-भावसे बैठे रहना)

सभी भक्त—हरि हरि बोल !

निमाई—तुम मुझे लज्जित क्यों करते हो ?

(श्रीधरका लौकी लेकर प्रवेश और लौकी रखकर प्रभुको प्रणाम)

निमाई—कौन श्रीधर ! इतनी रातमें लौकी !

श्रीधर—खाली हाथ दर्शन करने कैसे आता प्रभु ! और कुछ नहीं बन सका, इसलिये लौकी ही ले आया ।

निमाई—रात अधिक हो गयी है, जाओ, घर जाओ । (स्वगत) श्रीधरका द्रव्य नष्ट नहीं होना चाहिये । अभी रातमें ही लौकीका भोग लगेगा । (प्रकट) माँ, दूध-लौकी मिल गये, खीर बनाओ । और माँ, मेरे लिये हार कैसा बनाया है, मुझे दिखाया नहीं; उसे लेती आना तथा श्रीअद्वैत आचार्यने शान्तिपुरसे जो धोती भेजी है, उसे भी लेती आना ।

शची—(प्रसन्नतासे) जाती हूँ, बहूसे खीर बनानेको कहती हूँ; मैं हार और धोती लाती हूँ । निमाई अभी पहनेगा, मैं देखकर नेत्र शीतल करूँगी । (प्रस्थान)

मुझे अपने चरण-कमलोंका मधुपान करने दीजिये । आपका श्रीमुख शरत्पूर्णिमाके चन्द्रमाके समान है, नहीं, नहीं; वह बेचारा चन्द्रमा आपके मुखकी क्या समता करेगा ? मुझे इस मिथ्या उपमा देनेके लिये क्षमा कीजिये और अपनी भक्तिका दान कीजिये ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(श्रीधर गान करते हैं)

गान

ए तरंगे कूल दाओ गोरा गुणमनि !
कूले कूले भेसे वेड़ाइ,
कोथा ओहे दयामय,
धरो-धरो, दाओ-दाओ, चरण-तरणी ॥*

(शचीका प्रवेश)

शची—यह लो धोती और हार ! अभी पहनो। मैं नेत्र भरकर देखूँ !

निमाई—(वस्त्राभूषण पहनते हुए) हाँ, पहनता हूँ माँ ! (स्वगत) नहीं, तो तुम्हारे मनमें बड़ा दु:ख होगा। (पहनकर) देखो कैसा लगता हूँ, माँ ! लेकिन इसे पहनकर बाहर जानेसे लोग हँसेंगे।

शची—क्यों, तू अब बच्चा तो नहीं है। नवद्वीपमें तुझे शिशु-अध्यापक कहते हैं। भोजन तैयार है, रात्रि अधिक हो गयी है, शीघ्र आहार कर ले और सभीको विदा दे।

(सभीका प्रस्थान)

(२)

(निमाईका शयनकक्ष, पलँगपर निमाई बैठे हैं)

निमाई—(स्वगत) हार धारण कर लिया और धोती भी;

---

* (भावानुवाद) हे गुणमणि गौर ! इस भवसागरकी तरङ्गोंसे निकालकर मुझे आश्रय प्रदान कीजिये। मैं भवसागरमें बहा जा रहा हूँ, कहीं भी किनारा नहीं मिल रहा है। हे दयामय ! आप कहाँ हैं ? कृपाकर मुझे पकड़ लीजिये और अपनी श्रीचरण-नौकाका आश्रय प्रदान कीजिये।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दो-चार घड़ियोंके बाद संसार-त्याग करना है। यदि यह सब पहनकर न जाता तो माँके मनमें यही बड़ा दुःख रहता कि मैंने इस नयी वस्तुका एक भी दिन उपभोग नहीं किया। विष्णुप्रियासे पहले ही विदा ले चुका हूँ। शेष रात्रिमें गृह-त्याग करूँगा। यह वह नहीं जानती। कोई भी नहीं जानता। आज मैं प्रेम-तरङ्गें उछालकर विष्णुप्रियाको आनन्द-सिन्धुमें डुबा दूँगा। आज युवती स्त्रीके युवा पतिके रूपमें उसके साथ क्रीड़ा करूँगा। लोग मुझपर आक्षेप करेंगे कि उसे सदाके लिये त्यागनेके समय ऐसी प्रीति क्यों बढ़ायी? इससे तो उसका विरह-दुःख और भी बढ़ा! इसमें संदेह नहीं, मेरे इस रात्रिके व्यवहारसे उसकी विरहाग्निमें वृद्धि होगी, किंतु वह मुझे बिल्कुल भूल जाय, यह तो ठीक नहीं। मेरे प्रति उसकी प्रीति जैसे भी बढ़े, वही करना तो मेरा कर्तव्य है। स्त्रीके लिये उचित है कि वह स्वामीकी मूर्तिको अपने मानस-पटलसे एक मुहूर्तके लिये भी दूर न करे। फिर मेरा विरह तो जीवके लिये, विशेषतः विष्णुप्रियाके लिये बहुमूल्य धन है।

(पुष्पहार, चन्दन आदि सामग्री लेकर विष्णुप्रिया देवीका प्रवेश कर शयनगृहके कपाट बंद करना)

निमाई—(सहास्य) आओ, आओ प्रिये! मेरी प्राणप्रिये!

विष्णु०—आज इतना आदर, इतना सम्मान देखकर मुझे भय लगता है। तुम सदा शयन-गृहमें आते समय भाव-विह्वल रहते थे और मेरे प्रति लक्ष्य न कर केवल 'कृष्ण-कृष्ण' कहकर रोने लगते थे। आज मेरे भाग्यको क्या हो गया है?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निमाई—देखो, मेरे मनमें बहुत दिनोंसे एक इच्छा थी, आज उसे पूर्ण करूँगा; तभी इतना आदर कर रहा हूँ। आज मैं तुम्हें सजाऊँगा।

विष्णु०—क्या पुरुष भी सजाना जानते हैं? अच्छा, तुम मुझे सजाना, किंतु पहले मुझे सजाने दो।

निमाई—अच्छा तो सजाओ।

विष्णु०—अरे, तुमने यह दिव्य हार, दिव्य धोती कहाँ पायी?

निमाई—तुम नहीं जानतीं? माँने मेरे लिये हार तैयार किया है और धोती श्रीअद्वैत आचार्यने शान्तिपुरसे भेजी है।

विष्णु०—सुना तो था, किंतु दिन-रातमें मुझे देखनेका अवकाश कहाँ? अतिथि-सेवा, कितना भोजन बनाना पड़ता है; यह तुम क्या जानते हो? यह हार मुझे दो, मैं ठीकसे पहना दूँगी।

निमाई—पहले तुम्हें पहना दूँ। (हार पहनाना) यह हार तो तुम्हारे लिये है; पुरुष क्या हार पहनते हैं? और फिर मैं कोई बालक थोड़े ही हूँ!

विष्णु०—आज ही हो गये बड़े प्रवीण और वृद्ध! चौबीस वर्षके भी तो नहीं, और अभीसे वृद्ध!

(अपने गलेसे हार उतारकर स्वामीके गलेमें पहनाना)

निमाई—यह क्या करती हो, मुझसे हार बदल लिया; तब तो तुम मेरी हो गयी!

विष्णु०—तो पहले किसी औरकी थी?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निमाई—यह क्या पता ?

विष्णु०—तुम्हारा यह भाव देखकर सुख तो नहीं, उलटा भय होता है। तुम्हें इस तरह कभी नहीं देखती थी, मैं तो तुम्हें ईश्वर समझती थी, पास आते भी भय लगता था।

निमाई—तुम्हें भय लगता, कहीं काट न लूँ! क्यों, सजाया नहीं ?

विष्णु०—सजाती हूँ। कैसा सुन्दर मुख, कैसी सुन्दर छवि! (श्रीनिमाईको सजाना)

निमाई—अब मेरी बारी है। (विष्णुप्रियाको सजाकर और उनके हाथमें दर्पण देकर) देखो, कैसा सजाया है ?

विष्णु०—(दर्पण लेकर पहले निमाईको देते हुए) पहले तुम देखो, तुम्हें कैसा सजाया है ?

निमाई—तुम्हारे रूप-वर्णनमें एक पद रचा है। मैं गाता हूँ, तुम नृत्य करो।

विष्णु०—स्त्री होकर नृत्य करूँ! यह क्या ?

निमाई—क्यों, मैं, जब बाहर कीर्तनमें नृत्य करता हूँ, तब तुम भी तो यहाँ नृत्य करती हो ?

विष्णु०—तुमने कैसे जाना ? उस समय क्या तुम्हें ज्ञान रहता है। उस समय तो सभी लोग अपनेको खो देते हैं। ज्ञानशून्य होकर जैसे-जैसे तुमलोग कृष्ण-कृष्ण कहकर नृत्य-कीर्तन करते हो, मैं भी उसीके साथ-साथ नृत्य करती हूँ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निमाई—तो तुम दोहारकी करो, मैं गाता हूँ। टेक है—'चाँदबदनी धनी मृगनयनी।'

विष्णु०—क्या कहते हो, मुझे लज्जित करते हो!

निमाई—मेरे सामने लजाती हो, बड़ा अन्याय है।

विष्णु०—तुमने मेरी लज्जा नष्ट कब की। जब कभी मेरे पास आये, स्वामीके रूपमें अये और मैंने प्रणाम किया।

निमाई—अच्छा, पद सुनो—

सलाजनयनी बाला मुख नाहिं तोले[१]।
पड़िले[२] पड़िल भ्रमर पद्ममधु भोले[३]।
हिङ्गुले[४] रंजित ठोंटे[५] काँपे मृदु मृदु।
प्रेम-सरोवर आँखि झरे बिन्दु बिन्दु।
नयनेर तारा आध पद्मदले ढाका।[६]
जनमेर मत हियार माझे रइल आँका।[७]
नानाभाव खेले मुखे चंचल चपल।[८]
कठिन पुरुष आमाय करिले पागल।[९]
विष्णुप्रिया-आज्ञा पेये[१०] बलाइ[११] माला गाँथे[१२]।
अंजलि करिया दिल प्रियाजीर हाते।[१३]—

---

१. उठाती। २. गिर पड़ा। ३. (के) भ्रमसे। ४. लालीसे। ५. अधर। ६. नेत्रोंका तारा अर्द्ध पद्मदलसे ढका हुआ है। ७. जन्मभरके लिये (यह स्वरूप) हृदयमें अङ्कित हो गया है। ८. चञ्चल चपल मुखपर विभिन्न भाव प्रकट होते रहते हैं। ९. मैं बड़ा कठोर हृदय-वाला हूँ, पर मुझे भी उन्होंने अपनी रूप-सुधाका पान करा पागल कर दिया है। १०. पाकर। ११. ग्रन्थकारका श्रीगुरुदत्त नाम बलरामदास। १२. गूँथता है। १३. और वह माला अञ्जलिमें लेकर विष्णुप्रिया देवीके हाथोंमें अर्पित की।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तुम्हारे नेत्र निद्रासे भर आये हैं, आओ शयन करो ।

विष्णु०—नहीं, मैं नहीं सोऊँगी ।

निमाई—(स्वगत) तो फिर मैं कैसे सोऊँ ? (प्रकाश्यमें) आओ, शयन करें । बत्ती कुछ कम कर दो, जिससे बिल्कुल अँधेरा न हो जाय ।

विष्णु०—नहीं, मैं नहीं सोऊँगी ।

निमाई—क्यों, कष्ट होगा ! क्यों नहीं सोओगी ?

विष्णु०—तुम्हारा भाव देखकर लगता है कि तुम आज रात्रिमें मुझे छोड़कर चले जाओगे । तभी तो इतना आदर है । नहीं, मैं नहीं सोऊँगी !

निमाई—(स्वगत) बड़ी कठिनाई है । (प्रकाश्यमें) अच्छा आओ, हम दोनों सोयेंगे ।

विष्णु०—मैं बिल्कुल नहीं सोऊँगी । सो गयी तो धोखा देकर चले जाओगे ।

निमाई—(स्वगत) तो क्या जीवोद्धार नहीं होगा ? हठपूर्वक सुलाना होगा । (प्रकाश्यमें) शयन करो, शयन करो । (दृढ़तासे) मेरी आज्ञासे शयन करो, अभी शयन करो ।

विष्णु०—यह क्या, मेरी आँखें नींदसे भर आयीं । मैं नींदको नहीं हटा सकती । (हाथ जोड़कर) हे निद्रादेवी ! मुझे क्षमा करो । क्षमा न करोगी, तो प्रभु मुझे छोड़ जायँगे । क्यों, क्षमा न करोगी ? तो तुम नारी-हत्याके लिये उत्तरदायी होओगी ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निमाई—प्रिये ! तुम ठीक समझती हो, मैं अभी जाऊँगा। निद्रादेवीको जो तुम शाप दे रही हो, वह उन्हें नहीं लगेगा; क्योंकि मेरे जानेका उद्देश्य है—जीवोद्धार। प्रिये ! स्मरण रक्खो, तुम्हारे कष्टमें जीवोंका मङ्गल है।

विष्णु०—नींदको नहीं हटा सकी, नहीं हटा सकी ! निद्राने चेतनाहीन कर दिया। अच्छा तो आओ, तुम्हें हृदयसे लगाकर भुजाओंमें बाँधकर सोऊँगी।

(निमाईको गाढ़ालिङ्गन कर पलंगपर गिरना)

(कुछ समय बाद निमाईका धीरे-धीरे उठना, अपनी बगलका तकिया विष्णुप्रियाके पैरोंके नीचे तथा सिरका तकिया उनकी गोदके पास रखना। फिर स्वर्णहार खोलकर रखना और नये वस्त्र उतारकर मलिन वस्त्र धारण करना। तत्पश्चात् प्रियाके कपोल चूमकर बत्ती बुझाकर शयनगृहके कपाट खोलना और धीरेसे बाहर निकल जाना।*)

विष्णु०—(चकित हो उठकर) क्या प्रभु ! (स्वामीको पलंगपर न देखकर पलंगपर हाथ फैलाना और प्रभुको न पाकर रो

---

* निद्रिता श्रीविष्णुप्रियार श्रीवामचरणे।
पार्श्वोपधानपरि करिया रक्षणे॥
वक्षस्थले निज गंड उपाधान दिया।
बाहिर हइल गोरा द्वार उद्घाटिया॥
—श्रीवंशीशिक्षा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उठना तथा सिर पीटना) क्यों प्रभु तुम कहाँ गये ?* द्वार खोलकर देखूँ। (कमरेसे निकलकर) क्यों, यहाँ भी तो नहीं हैं, तो क्या चले गये ? (पुनः कमरेमें आकर बत्ती जलाकर) यह कण्ठहार पड़ा हुआ है, नयी धोती भी पड़ी है। दूसरी धोती पहनी है। कहाँ गये ? ओ माँ ! उन्होंने कहा था न पहले कि 'मैं गृह-त्याग करूँगा !' ठीक, समझी, उन्होंने इतना ही कहा था कि अभी जाऊँगा। तब वे निश्चय ही मुझे छोड़ गये। हा श्रीकृष्ण ! दुखियाके साथी ! यह क्या हुआ ? वे निश्चय ही चले गये। समझी, तभी इतना प्रेम ! अब समझी, जीवनभरको विदा होनेके लिये एक सुखकी रात्रि देकर मुझे इतने सुखमें डुबोया था। मेरी ओर जो देखा, वह दृष्टि नहीं, गुप्त रोदन था। नेत्रोंमें हँसी थी, पर हृदयमें पीड़ा। (धीरे-धीरे शचीके कमरेके पास जाकर कपाटोंमें धक्का देना) माँ, उठो, उठो ! ओ माँ !

शची—(कपाट खोलकर) कौन, बहू ! निमाई तो ठीक है ?

विष्णु०—मुझे नींद आ गयी थी, जगनेपर देखा तो कमरेमें नहीं हैं।† जो धोती पहने थे, वह पड़ी हुई है और गलेका हार

---

* एथा विष्णुप्रिया, चमकि उठिया,
पालङ्के बुलाय हात।
प्रभु ना देखिया, उठिल काँदिया
शिरे मारे कराघात॥

† शचीर मन्दिरे आसि, दुयारेर पाशे बसि-
धीरे धीरे कहे विष्णुप्रिया।
शयन-मन्दिरे छिलो, निशाजोगे कोथा गेलो,
मोर मुंडे बजर पाड़िया॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भी। पता नहीं मेरे सिरपर वज्रपातकर वे कहाँ चले गये ?

शची—(शीघ्रतासे बत्ती जलाकर विष्णुप्रियाके साथ घरसे बाहर आना) यह घरका द्वार खुला हुआ है। ओ निमाई! ओ निमाई! तू कहाँ चला गया ? अरे निमाई! लौटकर घर आ। निमाई! ओ निमाई मेरा बेटा!* मैं तेरे संकीर्त्तनमें बाधा नहीं दूँगी। (विष्णु-प्रियासे) बेटी! राजमार्गपर तुम्हारा चलना ठीक नहीं; मैं बाहर द्वारपर बैठी हूँ, तुम भीतर जाओ। (विष्णुप्रियाका भीतर जाना) ईशान! इधर आओ। मेरा हृदय फट रहा है। (ईशानका प्रवेश और उपवेशन; शचीका ईशानके सहारे बैठना) ओ ईशान! (संकेतसे बताना कि निमाई चला गया है)

(प्रातः गङ्गास्नान कर श्रीनिमाईके दर्शनार्थ श्रीवासका प्रवेश)

श्रीवास—माँ, बाहर द्वारपर क्यों ?

(शचीका संकेतसे बताना कि निमाई चले गये हैं)

(क्रमशः निताई एवं अन्यान्य भक्तोंका प्रवेश †)

निताई—क्या बात है ?

---

* गौराङ्ग जागये मने, निद्रा नाहिं दु नयने
शुनिया उठिल शची माता।
आलू थालू केशे धाय, वसन ना रहे गाय,
शुनिया वधूर मुखे कथा।
त्वरिते ज्वालिया वाती, देखिलेन इति उति,
कोन ठाइ उद्देश्य ना पेये।
विष्णुप्रिया बधू साथे, कादिते कादिते पथे,
डाके शची निमाइ बलिये।—श्रीवासुघोष।

† सकल महान्त मेलि, सकाले सिनान करि,
आइल गौराङ्ग देखिवारे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शची—भाई, मैं कुछ नहीं जानती। मेरा घर धन-धान्यसे भरा है, तुम सब उसे भोगो; मैं गङ्गामें प्रवेश करूँगी, तुम मुझे रोकना नहीं। निमाई चला गया है!

श्रीवास—घबरा क्यों रही हो। कैसे जाना कि उन्होंने बिल्कुल ही गृह-त्याग कर दिया ? कुछ स्थिर होओ, हम सब परामर्श करते हैं। (नितांईके प्रति) आओ, हम सब एक ओर बैठें। (कुछ दूर जाकर) श्रीपाद! आपका क्या विचार है ?

निताई—और क्या विचार होगा ? जो होना था; हो चुका। मेरे विचारमें तो प्रभुने गृह-त्याग किया है।

श्रीवास—मुझे भी यही लगता है। हम सबको भी संसार त्यागकर उनका अनुगामी होना चाहिये। फिर भी, एक बार उनकी खोज करना कर्तव्य है। जिन-जिन स्थानोंमें संन्यासके क्षेत्र हैं, उन सबका स्मरण करो। मैं क्षेत्रोंका विभाग किये देता हूँ! प्रत्येक क्षेत्रपर उन्हें खोजनेके लिये चार-पाँच व्यक्ति जाने चाहिये।

निताई—परंतु सबसे पहले कटवा देख लेना चाहिये। एक दिन प्रसंगवश प्रभुने मुझसे कहा था कि 'मैं कटवा नगरमें केशव भारतीसे संन्यास ग्रहण करूँगा।' मैं कुछ जानकार व्यक्तियोंके साथ वहाँ जा रहा हूँ। चलो शची मातासे कह आवें। (शची माँके पास आकर) प्रभु कहाँ गये हैं, शायद मैं जानता हूँ। मैं जा रहा

गियाछे गौराङ्ग छाड़ि! विष्णुप्रिया आछे पड़ि,
शची कान्दे बाहिर दुयारे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हूँ । आपसे प्रतिज्ञा करता हूँ कि उनको आपसे मिला दूँगा । देवी विष्णुप्रिया कहाँ है ?

ईशान—वह अपने पलंगके नीचे अचेत पड़ी हैं ।

निताई—अच्छा, उनसे कह देना, मैं प्रभुको लेने जा रहा हूँ । (सभीका प्रस्थान)

चतुर्थ अङ्क

(१)

(कटवा नगर; सुरधुनी-तीर; वटवृक्षके नीचे केशव भारती ध्यानमग्न हैं; निमाईका प्रवेश ।)

निमाई—स्वामिन् ! मेरा प्रणाम ग्रहण कीजिये ।

(साष्टाङ्ग प्रणाम)

भारती—(ध्यान टूटनेपर) तुम कौन हो ? (एकटक निरीक्षण) तुम कौन हो ? तुम मनुष्य हो या देवता ? तुम मुझे प्रणाम करते हो, किंतु तुम्हारा तेज देखकर मुझे लगता है कि तुम मनुष्य नहीं हो ! मुझे ही तुम्हारे प्रति प्रणाम करना चाहिये ।

(सम्भ्रम उठना)

निमाई—(हाथ जोड़कर) स्वामिन् ! मैं संसार-बद्ध सामान्य जीव हूँ, भवसागरमें चक्कर काट रहा हूँ । आप मेरा उद्धार कीजिये ।

भारती—मैं जो देख रहा हूँ, उससे तो ऐसा लगता है कि तुम मनुष्य नहीं हो, देवता हो; तुम ही मेरा उद्धार कर सकते हो ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निमाई–प्रभो ! ऐसा न कहिये । लोग मुझे निमाई कहकर पुकारते हैं; मेरा घर नवद्वीपमें है । प्रभो ! आप वचन दे चुके हैं कि मुझे संन्यास देंगे ।

भारती–ठीक, स्मरण आ गया । तुम निमाई पण्डित हो, नवद्वीपके अवतार ! गोलोक त्यागकर जीवोद्धारके लिये नवद्वीपमें उदय हुए हो ? मैं तुम्हारे घर भिक्षार्थ गया था और 'तुम्हें संन्यास दूँगा'—यह कहा था, यह मैं मानता हूँ; पर संन्यास तुम चाहते क्यों हो ? तुम्हें तो उसकी आवश्यकता नहीं है । तुम्हें देखनेसे ऐसा प्रतीत होता है कि तुम संन्यासियोंसे भी अधिक श्रेष्ठ हो ।

निमाई–स्वामिन् ! मैं श्रीकृष्णको खो चुका हूँ, उनके अन्वेषणार्थ श्रीवृन्दावन जाऊँगा । (ऊपर देखकर विह्वलतासे आर्त-स्वरमें) कृष्ण ! कृपामय ! दर्शन दीजिये ! मेरे प्राण व्याकुल हैं, आपके विना यह संसार अन्धकारमय है ।

भारती–तुम श्रीकृष्णका अन्वेषण करने जाओगे ? सुनकर हँसी आती है, तुम्हीं तो श्रीकृष्ण हो !

निमाई–(संकुचित होकर) प्रभो ! क्या कहते हैं आप ! ऐसी बात न कहिये ।

भारती–तुम्हीं तो हो श्रीकृष्ण ! जिस दिन तुम्हें नवद्वीपमें देखा था, उसी दिन मैंने यह जान लिया था । अब भी वही विश्वास है । फिर यह तुम्हारी क्या लीला है ? तुम संन्यास क्यों ले रहे हो ? क्या श्रीमती पुनः मान कर बैठी हैं ? क्या कलियुगमें पुनः श्रीकृष्ण-लीला आरम्भ हो गयी है ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निमाई—ओह ! ओह ! एक तो मैं श्रीकृष्णके लिये मर रहा हूँ, उसपर आप ऐसे वाक्योंसे मेरे मर्मस्थानपर चोट पहुँचा रहे हैं। प्रभो ! मेरे साथ और अधिक छल न कीजिये ! मुझे संन्यास दीजिये, जिससे मैं श्रीवृन्दावन चला जाऊँ। कृष्ण हे ! मैं अभी आया। मैं अभी आया, मैं यहाँसे छूटते ही एक ही दौड़में आपके श्रीचरणोंमें आ पहुँचूँगा।

भारती—हम सभीको तुम्हें प्रणाम करना उचित है, पर संन्यास लेनेपर तुम मुझे गुरु मानकर प्रणाम करोगे और इस प्रकार अपनी चरण-धूलिसे—जिसके लेनेसे मुझे अपार सुख होता है—वञ्चित करोगे। इतना ही नहीं, तुम सभीके प्रणम्य हो। तुमने मुझे प्रणाम कर मेरा सर्वनाश कर दिया। जाओ, मुझसे तुम्हारा संन्यास नहीं होगा।

निमाई—आप वचनवद्ध हैं कि संन्यास दूँगा।

भारती—यह ठीक है, पर अभी संन्यासका समय नहीं है, अभी तुम्हारी अवस्था छोटी है। पहले पचास वर्ष पूरे करो, तब आना।

निमाई—प्रभो ! मेरे प्राण निकल रहे हैं, कृपाकर मुझे छुटकारा दीजिये। आपने विश्वास दिलाया था। उसी विश्वासके कारण मैंने आपका आश्रय लिया है।

भारती—मैं जानता हूँ, तुम्हारे घर वृद्धा माँ हैं, तरुणी भार्या है। उन सबका प्राण-वध कर तुम संन्यास लोगे, अतः इस कार्यमें मैं तुम्हारी सहायता नहीं कर सकता।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(क्रमशः ग्रामीण लोगोंका आगमन)

निमाई—प्रभो ! क्या मैं पुनः स्मरण करा दूँ कि आप प्रतिश्रुत हैं ?

भारती—(रुखाईसे) बार-बार यही कहते हो, मैंने क्या इसी माघमासमें तुम्हें दीक्षा देनेको कहा था ?

(क्रमशः जनता-वृद्धि)

निमाई—(रोते-रोते) मेरा जाना नहीं हो सका। हे कृष्ण कृपामय ! मैं क्या करूँ, कहाँ जाऊँ ? मैं कहाँ जानेपर आपको प्राप्त करूँगा ? मैं श्रीवृन्दावन जानेपर ही आपको पा सकता था।

(क्रमशः और भी लोगोंका एकत्र होना)

भारती—निमाई ! तुम नहीं जानते कि संन्यासमें क्या-क्या कष्ट हैं। मेरे प्राण तो कठोर होनेके कारण बचे हुए हैं, पर तुम्हारा शरीर नवनीतके सदृश सुकोमल है; तुम कठोर पृथ्वीपर कैसे शयन करोगे ? तुम थोड़े ही दिनोंमें मारे जाओगे। निमाई ! तुम्हें देखने-मात्रसे मेरे हृदयमें पुत्र-वात्सल्य उत्पन्न होता है। मैं संन्यासी हूँ, समस्त मानसिक कोमल भावोंको ध्वंस करनेकी चेष्टा करता हूँ, किंतु तुम संन्यास लोगे, यह सुनकर मेरा भी हृदय विदीर्ण हुआ जाता है। इधर देखो, कौन आये हुए हैं, ये क्या कहेंगे ? यह देखो निमाई ! स्त्रियाँ अपने जल-पात्रोंको लेकर खड़ी हैं; तुम्हें एकटक देख रही हैं। कुलवधुएँ अपने घूँघटोंमेंसे तुम्हारी ओर निहार रही हैं। ग्रामवासी सभी अपना दैनिक नित्यकर्म भूलकर एक-एक कर आकर तुम्हारे चारों ओर खड़े हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

एक वृद्धा—बच्चा ! तुम कौन हो ? क्या तुम्हारी माँ है ? तुम उसे प्राणहीन करनेके लिये संन्यास लेने आये हो ? बेटा ! घर लौट जाओ; कहना मानो, घर लौट जाओ । मातृवध मत करो ।

कोई रमणी—सुना है, तुम्हारी बहू भी है । तुम संन्यासी बनोगे, उसका क्या करके आये हो ? ऐसी निष्ठुरता न करो ।

(गदाधर, निताई, मुकुन्द एवं चन्द्रशेखरका प्रवेश)

निताई—(जोरसे चिल्लाकर) ये हैं प्रभु ! ये हैं प्रभु !

(दौड़कर प्रभुके आगे पृथ्वीपर गिर पड़ना)

निमाई—आ गये, अच्छा हुआ; मैं इसी समय मुक्त होऊँगा । मुकुन्द ! एक बार कृष्णमङ्गल गान करो, मेरे कर्ण उपवासी हैं, मैंने बहुत समयसे कृष्णनाम नहीं सुना ।

मुकुन्द—जो आज्ञा, मैं आरम्भ करता हूँ ।

(कुछ नागरिकोंका मृदङ्ग-करताल आदि लेकर प्रवेश)

खेल देखो, प्रभुने जैसे ही कीर्तन सुननेकी इच्छा प्रकट की है, वैसे ही मृदङ्ग-करताल आ पहुँचे !

कीर्तन

हरि हरये नमः, कृष्ण यादवाय नमः ।
यादवाय, माधवाय, केशवाय, नमो नमः ॥
बोलो गोपाल गोविन्द राम श्रीमधुसूदन ॥

(सभीका गान और प्रभुका भुजा उठाकर बड़ी भङ्गिमासे नृत्य)

भारती—(उठकर निमाईको पकड़) निमाई ! शान्त हो, मेरी एक बात सुनो । तुम यह नृत्य-गान क्यों करते हो ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मुकुन्द–हमारा भजन नाच-गाकर होता रहा है। श्रीकृष्ण हमारे प्राणनाथ हैं, हम उनका नाम लेकर गुणगान करते हैं और नाचते हैं।

भारती–अच्छा, निमाई! मनुष्य पृथ्वीपर जिन-जिन वस्तुओंकी अभिलाषा करते हैं, रूप-विद्या-भार्या-पद—ये सभी तो तुम्हारे पास हैं। इन सबको त्यागकर तुम राहके भिखारी हो रहे हो, इसलिये तुम्हारा रोना तो ठीक है, पर नाचते क्यों हो?

मुकुन्द–नाचें क्यों न! ये तो आनन्दमय हैं।

भारती–तो ठीक; सर्वस्व त्यागकर, वृद्धा माता एवं युवती पत्नीको छोड़कर संन्यास लेनेके समय नृत्य-गान करना! यह जगत्में पहली बार हुआ है। गाओ, गाओ, मेरा शरीर भी झूम रहा है।

(सभी गाते हैं)

हरि हरये नमः कृष्ण यादवाय नमः।
यादवाय माधवाय केशवाय नमो नमः॥
गोपाल गोविन्द राम श्रीमधुसूदन॥

(श्रीनिमाईका नृत्य)

भारती–यह क्या, मैं भी न रह सका। मेरे भी पैर नाच उठे। (नृत्य)

(निमाई एवं भारतीका परस्पर गलेमें हाथ डालकर नृत्य)

निताई–(दोनोंको पकड़कर) आप विश्राम कीजिये।

भारती–(चकित होकर) यह क्या हुआ! मैंने नृत्य किया! वे लोग क्या कहेंगे! यहाँ तो बहुत लोग उपस्थित हैं। हुआ करें;

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अच्छा निमाई ! तुम संन्यास क्यों चाहते हो ? मैंने तो भवसागर पार करनेके लिये संन्यास लिया है, पर तुम तो स्वयं पार करते हो, तुम्हें संन्यासकी क्या आवश्यकता ?

निमाई—(पैरोंमें पड़कर रोते हुए) एक तो मैं स्वयं मरा हुआ हूँ, उसपर और अधिक अवैध स्तुति करके मेरा वध मत कीजिये ।

भारती—मैं संन्यास देकर तुम्हारा वध नहीं कर सकता, फिर भी, तुम्हारी अकिञ्चनतासे मैंने हार मानी; पर अपनी माता और पत्नीकी अनुमति ले आओ । स्मरण रहे, अनुमति सच्चे मनसे मिलनी चाहिये । तुम्हारा जो तेज है, उसे देखकर कोई भी तुम्हारा बाधक नहीं हो सकता । मैं तुम्हारी माता और पत्नीकी स्वेच्छासे अनुमति चाहता हूँ ।

निमाई—स्वामिन् ! वे अनुमति दे चुकी हैं ।

भारती—यह हो सकता है; क्योंकि पृथ्वीपर तुम्हारा विरोध करनेवाला कोई नहीं है । तुम लौट जाओ और एक बार फिर अनुमति लेकर आओ ।

निमाई—यह बड़ी कठिन आज्ञा है, फिर भी मैं इसका पालन करूँगा । मैं सम्मति लेने चला । (गमन)

भक्तगण—प्रभु ठहरिये, हम भी आ रहे हैं ।

(निमाईका रुकना)

भारती—(स्वगत) जैसे ही तुम जाओगे, मैं यह स्थान छोड़कर चला जाऊँगा । (क्षणिक सोचकर) हाय ! मैं क्या कर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रहा हूँ ! सरल बच्चेको ठग रहा हूँ, मैं संन्यासी ! छिः ! (प्रकाश्यमें) निमाई ! तुम लौट आओ, मैं तुम्हें संन्यास दूँगा ।

निमाई—स्वामिन् ! मैं जानता हूँ, आप दयामय हैं; बोल हरि बोल ! (नृत्य)

एक नागरिक—(निमाईके प्रति) भाई ! घर जाओ, तुम्हें देखकर प्राण रोते हैं ।

द्वि० ना०—एक बार अपनी माँ और पत्नीके विषयमें तो सोचो । हाय ! उनकी क्या दशा होगी ?

निमाई—भाई ! तुम सभी आशीर्वाद करो, जिससे मैं प्राणनाथ श्रीकृष्णको प्राप्त कर सकूँ ।

एक चतुर स्त्री—(चिल्लाकर रोती हुई) हाय ! यह क्या हुआ ! बेटा ! घर जा, शायद तेरी माँ अबतक मर चुकी है ।

द्वि० स्त्री—(अवगुण्ठनमेंसे) ओ माँ, प्राण जा रहे हैं । प्राण जा रहे हैं ! अरे, तुमलोग उनसे अच्छी तरह निषेध क्यों नहीं करते !

भारती—क्या आश्चर्य ! यह सब स्त्रियाँ कहाँसे आ रही हैं ! मानो पृथ्वी चीरकर मनुष्य निकल रहे हैं । इतने लोग क्या कटवा नगरमें थे । मेरी तो चिरकालकी साधना नष्ट हो गयी । मुझे नाचना नहीं चाहिये, किंतु मैं नाचा । इतने दिनकी साधनाद्वारा माया-मोहका त्याग करके मैंने हृदय दृढ़ किया था, किंतु आज मैं स्त्रियोंकी भाँति फूट-फूटकर रो रहा हूँ । मैं ही तो नहीं, सभी रो रहे हैं । यह क्या ! करुण-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रसका सागर सहसा उमड़ पड़ा। (भक्तोंके प्रति) आपलोग जानते हैं, संन्यासके लिये दधि, दुग्ध, घृत, मिष्टान्न, वस्त्र, पुष्प, पुष्पमाला, कौपीन, बहिर्वास आदि वस्तुओंकी तथा एक नाईकी आवश्यकता होती है।

निताई—यह देखो, द्रव्यसम्भार स्वयं ही आ रहा है।

(दही, मिठाई, वस्त्र आदि लेकर क्रमशः कुछ व्यक्तियोंका प्रवेश)

भारती—इन लोगोंने कैसे जान लिया कि इन सभी द्रव्योंकी इस समय आवश्यकता होगी?

निताई—हमारे प्रभुका यही तो रंग है। वे संन्यास ले रहे हैं, तभी सारा विश्व रो रहा है। फिर संन्यास-ग्रहणका उपकरण स्वयं आ जुटे, इसमें क्या आश्चर्य।

(एक नाईका प्रवेश)

भारती—क्यों हरिदास[1]! तुम भी आये हो? अच्छा, तुम्हें क्षौर-कार्य करना होगा।

नापित—मुझसे यह काम न होगा।

भारती—क्यों!

नापित—इन केशोंमें कौन हाथ लगायेगा? देखो, कैसे सुन्दर केश हैं! मैंने कभी ऐसे केश नहीं देखे। इन केशोंको मैं नहीं काट सकता।

निमाई—हरिदास! मुझे मुक्त करो, मैं वृन्दावन जाऊँगा। हरिदास!

---

१. नाईका नाम।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीकृष्ण तुम्हारा मङ्गल करेंगे ।

हरिदास—वे किया करें, मैं वह मङ्गल नहीं चाहता । कटवामें बहुत नाई हैं, बुला लीजिये । मैं इन केशोंमें हाथ नहीं लगा सकता ।

निमाई—क्यों, तुम्हें क्या आपत्ति है ? हरिदास ! मेरा हृदय विदीर्ण हो रहा है, मुझे शीघ्र मुक्त करो ।

हरिदास—मेरा भी हृदय फटा जा रहा है । मैं काटूँ यह केश ? तुम्हें संसारसे मुक्त करूँ ? यह मुझसे नहीं हो सकता । चाहे मैं मरूँ, मेरा पुत्र मरे, मैं नरकमें जाऊँ, किंतु यह कार्य मैं नहीं करूँगा* । मेरे प्राण आरम्भसे ही कठोर हैं, किंतु वह आज फटे जा रहे हैं । (क्रन्दन)

निमाई—(नाईके गलेमें हाथ डालकर) शान्त हो, कृपा कर मुझे स्वतन्त्र कर दो ।

हरिदास—देखता हूँ, तुम साधारण मनुष्य नहीं हो, मैं जिस ठाकुरकी पूजा करता हूँ, तुम वही हो; मेरा वध करने धरापर आये हो । अच्छा ठाकुर ! मैं नाई हूँ; बहुत लोगोंके केश काटता हूँ । पैरोंके नख काटता हूँ । यदि अब तुम्हारे बाल काटूँ तो इन हाथोंको फिर अन्य सबके पैरोंसे कैसे लगाऊँगा । जिसके पैरोंमें हाथ लगाऊँगा, उसका सर्वनाश हो जायगा, मेरा भी सर्वनाश हो जायगा ।

निमाई—इसके लिये क्या चिन्ता है ? मेरे वरदानसे तुम्हें अब

---

* 'श्रीचैतन्यमङ्गल' ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नाईका काम नहीं करना पड़ेगा । तुम मधुमोदक होओगे और इहकाल-परकालमें सब प्रकारसे तुम्हारा मङ्गल होगा ।

हरिदास—ठाकुर ! मैं मङ्गल-अमङ्गल नहीं जानता, फिर भी तुम्हारी आज्ञाका उल्लङ्घन नहीं कर सकता । जो सभीसे बड़े ठाकुर हैं, वही हो न तुम ? मैं मूर्ख हूँ, तभी इतनी देरसे व्यर्थ बक रहा हूँ । (सभीके प्रति) महाशयगण ! आप रोते हैं, मैं भी रोता हूँ । आप मेरे क्षौर करनेपर क्रोधित होंगे, पर मैं प्रभुकी आज्ञाका उल्लङ्घन नहीं कर सकता । आओ, प्रभु बैठो, क्षौर करता हूँ ।

एक युवक—ठहरो ! इतनी शीघ्रता मत करो । क्यों भारती गुसाँई ! तुम सोनेकी पुतली-जैसे इस नवयुवकसे गृह-त्याग करा रहे हो ? ऐसा करते तुम्हें लज्जा नहीं आती, दुःख नहीं होता ? नहीं, तुम समझते हो, एक शिकार मिला है । यही बात है न ?

भारती—नहीं भाई ! मेरी इच्छा नहीं; पर ये हम-तुम-जैसे सामान्य मनुष्य नहीं हैं । मैं इनकी आज्ञाकी उपेक्षा नहीं कर सकता ।

द्वि० युवक—नहीं, मीठी बातोंसे काम नहीं चलेगा । आओ, सब मिलकर इस संन्यासीको समाप्त कर दें, जिससे यह विपत्ति दूर हो जाय ।

भारती—(हाथ जोड़कर) ठीक है, मेरा वध करो, जिससे मैं भी इस अपराधसे बच सकूँ ।

द्वि० युवक—क्यों, तुम इनसे क्यों नहीं कहते कि मैं संन्यास नहीं दूँगा, घर जाओ ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भारती—कहा है, किंतु ये नहीं मानते । मैं इनकी बात टाल नहीं सकता । तुम क्यों नहीं कहते ?

एक वृद्ध—अच्छा, मैं वृद्ध हूँ, मेरी बात मानेंगे, मैं कहता हूँ । (निमाईके प्रति) भाई नवीन अध्यापक ! घर लौट जाओ । क्या पता तुम्हारी माँ और पत्नी अबतक जीवित हों या न हों ।

निमाई—(हाथ जोड़कर) बाबा ! मैं श्रीकृष्णको खोजने जा रहा हूँ, इसमें बाधा न दो । श्रीकृष्ण-प्राप्ति जीवका प्रधान कर्तव्य है ।

वृद्ध—प्रधान कार्य है, तुम ठीक कहते हो । हम सभीको तुम्हारा साथी होना चाहिये, किंतु हम माया-मुग्ध जीव हैं, ऐसा नहीं कर सकते । तुम स्वच्छन्द संन्यास ग्रहण करो और जीवोंका भला करो ।

वृद्धा—तुम हटो, तुम तो और उकसाते हो । मैं कहती हूँ— 'अरे बेटा ! तुम्हारी माँ तुम्हारे वियोगमें इतनी देरसे मर रही हैं । मातृवध करना क्या धर्म है ? बेटा ! घर जाओ; तुम नातेमें हमारे कुछ नहीं हो, फिर भी हम सभी धीरज छोड़कर रो रहे हैं । एक बार सोचो तो, तुम्हारी माँकी क्या दशा होगी !

निमाई—माँ ! मैं श्रीकृष्ण-भजन करूँगा । मेरा यह कार्य अच्छा है अथवा संसारमें रहकर विषयोंमें मत्त रहना ? यदि इस कार्यसे मेरा भला होता है तो मेरी माँका भी भला होता है । यदि मेरी माँ मेरी शत्रु हैं तो वह इस कार्यमें बाधा देंगी और यदि हितैषी हैं तो सहायता ही करेंगी ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वृद्धा—तो ठीक है; मैं रोती हूँ, किंतु तुम्हें देख, तुम्हारे कार्योंको देख मेरा मन शान्त होता है। तुम ठीक कर रहे हो। तुम स्वतन्त्रतासे संन्यास लो। संसार तो झूठा है; आँखें बंद हुईं कि फिर संसार कहाँ ?

निमाई—तब हरिदास ! मुझे मुक्त करो, मैं श्रीवृन्दावन जाऊँगा।
(नाईका निमाईके सामने बैठना)

नाई—आह ! उह ! और नहीं कर सकता।

(पृथ्वीपर गिरकर लोट-पोट होना, सभीका रुदन)

निमाई—(नाईके गलेमें हाथ डालकर) उठो, हरिदास ! शान्त हो।

नापित—(उठकर अट्टहास कर) आज मुझे कैसा आनन्द ! आज मैं प्रभुका नाई बना !

(भङ्गिमा करते हुए नृत्य करना, नृत्य करते हुए पीछे हटकर पुनः निमाईके सम्मुख आना।)

निमाई—हरिदास ! शान्त होकर बैठो। मुझे मुक्त करो।

(नाईका बैठकर क्षौर-कर्मके लिये उद्योग करना)

निमाई—ठहरो ! पहले मैं एक बार नृत्य कर लूँ।

(उठकर निमाईका नृत्य)

भारती—सर्वस्व-त्यागकर संन्यास लेनेके समय आनन्दपूर्वक नृत्य ! यह केवल स्वयं श्रीकृष्ण ही कर सकते हैं ?

नाई—ठाकुर ! ठीक कहते हो। मेरा मन भी इस समय स्थिर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नहीं है। क्षौर करके सिरमें रक्तपात करूँ ? नृत्य करके कुछ शान्त हो लूँ; क्योंकि मेरे हाथ काँपते हैं।

(नापितका नृत्य)

निमाई—हरिदास ! इधर आओ ।

(दोनोंका हाथ पकड़कर नृत्य)

भारती—निमाई ! शान्त हो, मुहूर्त टला जा रहा है।

(निमाईका बैठना, नाईका क्षौर करनेको प्रस्तुत होना, नाईका हाथ काँपना, पश्चात् कुछ ठहरकर क्षौर करना, सभीका उच्चस्वरसे रोना)

भारती—निमाई ! गङ्गास्नान करके आओ ।

(निमाईका प्रस्थान, भारतीके अतिरिक्त अन्य सभीका उनके पीछे गमन, नाईका कटे हुए केशोंको लेकर नृत्य करते हुए जाना*)

नाई—(छूरे आदि गङ्गामें फेंककर) आज मेरे क्षौर-कर्मका अन्त हो गया। अब यह कार्य और नहीं करना होगा।

---

* तखन नापित आसि, प्रभूर सम्मुखे बसि,
क्षुर दिल से चाँचर केशे।
करि अति उच्च रव, कान्दे जत लोक सब,
नयनेर जले देह भासे।
हरि हरि कि ना हइल कांचन नगरे।
जतेक नगरवासी, दिवसे देखये निशि,
प्रवेशिल शोकेर सागरे।
मुण्डन करिते केश, हैया अति प्रेमावेश,
नापित काँदये उच्चस्वरे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निमाई—(स्नानसे लौटकर भारतीके प्रति) कौपीन देनेकी कृपा कीजिये ।

(भारतीका निमाईको कौपीन-बहिर्वास देना)

निमाई—(कौपीन मस्तकपर रखकर जनताके प्रति) हे मेरे सुहृद्गण ! हे माता ! हे पिता ! आप सब मुझे आज्ञा दीजिये, मैं कौपीन पहनकर श्रीकृष्णका दास हो सकूँ । हे बन्धुगण ! (सभीका क्रन्दन और हरिध्वनि) हे पिता ! हे माता ! आप सब आशीर्वाद दीजिये, जिससे मैं व्रजमें श्रीकृष्णको पा सकूँ । (रोदन और हरिध्वनि)

भारती—निमाई ! मेरी बायीं ओर इस आसनपर बैठो ।

निमाई—(बैठकर) स्वामिन् ! मैंने स्वप्नमें संन्यासका एक मन्त्र प्राप्त किया है । सुनिये, कैसा है वह !

(भारतीके कानमें मन्त्रोच्चारण)

भारती—(साश्चर्य) तुमने यह मन्त्र कहाँ पाया ? मेरा मन्त्र तो प्रकट नहीं हो सकता । अरे समझा, तुम तो अन्तर्यामी हो, सभीके हृदयमें वास करते हो । तुमसे क्या छिपा है ?

निमाई—प्रभु ! पुनः ऐसा कहकर मुझे अपराधी क्यों करते हैं ?

भारती—समझा, तुम किसीसे मन्त्र क्यों लोगे ? तभी पहले मन्त्र देकर मुझे शिष्य बना लिया । आहा ! कितने दयामय हो ! तुम्हीं तो जीवमात्रके गुरु हो !*

* मुड़ाइया चाँचर चूले, स्नान करि गङ्गाजले,
बले दाओ अरुण वसन ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निमाई—अब मन्त्र देनेकी कृपा कीजिये ।

(भारतीका निमाईके कानमें मन्त्रदान)

भारती—अब तुम्हारा नामकरण करना होगा । सोचता हूँ, तुम्हारा उपयुक्त नाम क्या होना चाहिये । (निमाईके वक्षःस्थलपर हाथ रखकर) तुमने सब जीवोंको श्रीकृष्णनामके प्रति चैतन्य किया है, अतः तुम्हारा नाम 'श्रीकृष्णचैतन्य' हुआ ।

कुछ व्यक्ति—क्या नाम ? क्या नाम ?

भारती—श्रीकृष्णचैतन्य !

सभी—जय हो, श्रीकृष्णचैतन्यकी जय हो ! (हरिध्वनि)

भारती—निमाई ! दण्ड और कमण्डलु धारण करो ।

गौराङ्गेर वचन, शुनिया भकतगन,
उच्चै स्वरे करये रोदन ।
अरुण दु खानि कानि, भारती दिलेन आनि,
आर दिल एकटी कौपीन ।
मस्तके परस करि, परिलेन गौरहरि,
आपनाके माने अति दीन ।
तोमरा बान्धव मोर एइ आशीर्वाद कर,
निज कर दिये मोर माथे ।
करिलाम संन्यास, नहे येन उपहास,
व्रजे येन पाइ व्रजनाथे ।
एत वलि गौरराय, ऊर्द्धमुख करि धाय,
दिक्‌विदिक्‌ नाहि माने ।
भक्तगण सबे पाछे, लोटाय लोटाय काँदे,
वासुदेव हाँकान्द कान्दने ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(निमाईका दण्ड-कमण्डलु धारण करना)

सभी—जय श्रीकृष्णचैतन्य ! जय पतित-पावन ! जय कंगाल-नाथ !

निमाई—(सभीके प्रति) हे बन्धुगण ! हे माता ! हे पितृगण ! आशीर्वाद दीजिये कि मैं व्रजमें पहुँचकर श्रीकृष्णको प्राप्त करूँ । (सभीकी हरिध्वनि) मैं इस समय संन्यासी भिक्षुक हूँ, आपसे यही मेरी भिक्षा है । मैं कंगाल हूँ, क्या मुझे भिक्षा नहीं दोगे ?

सभी—देंगे, देंगे ।

निमाई—मेरी यही भिक्षा है—(हाथ जोड़कर) तुम सभी उन मङ्गलमय श्रीकृष्णको भजो । मेरी हाथ जोड़कर यही प्रार्थना है । तो मैं श्रीवृन्दावन चला ! हे कृष्ण ! मैं आया !

(दण्डादि फेंककर गमनोद्यत)

भारती—कृष्णचैतन्य ! ठहरो, ठहरो । अपना दण्ड-कमण्डलु ले जाओ और मै भी तुम्हारे साथ जाऊँगा !

चन्द्रशेखर—(दोनों भुजाओंसे पथ रोककर) एक बार हमारी ओर देखो !

निमाई—(चन्द्रशेखरको देखकर) कौन भाई ! बैठो । (स्वयं बैठना) भाई ! मैं श्रीवृन्दावन जा रहा हूँ । श्रीकृष्ण मुझे बुला रहे हैं । इधर मेरी माँ रहीं । हे बन्धुगण ! मेरी माँसे कहना वे मुझे भूल जायँ । उन्होंने मेरी जो सेवा की, उस ऋणसे मैं कोटि युगोंमें भी उऋण नहीं हो सकता । माँ मेरा अपराध न लें । मैं उनकी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

संतान हूँ और वे मेरी माँ। उनसे कहना कि गृहस्थोंके बहुत-सी विधवा कन्याएँ होती हैं, मैं भी उन्हीं विधवाओंके समान हूँ। मनुष्योंकी अंधी-पङ्गु संतान भी होती है, मैं उनकी ऐसी ही वृथा संतान हूँ। मैं उनकी सेवा नहीं कर सका। माँसे मेरा प्रणाम कहना। मैं चला, हे कृष्ण! यह मैं आया, आया! (कहते हुए दौड़ना)

निताई—ठहरो, ठहरो। मैं आता हूँ।

मुकुन्द—ठहरो, मैं आ रहा हूँ।

कोई *व्यक्ति*—ठहरो, ठहरो नवीन संन्यासी।

द्वि० व्य०—तुम संसारमें और नहीं आओगे। ठहरो, ठहरो!

(चीत्कार करते हुए 'ठहरो', 'ठहरो' पुकारते सभीका पीछे दौड़ना)

(२)

(शची-गृह, शची माँ ईशानका सहारा लिये बैठी हैं। विष्णुप्रिया लेटी हैं। पास ही उनकी सहचरी बैठी हैं। श्रीवासका प्रवेश)

श्रीवास—माँ! एक ही स्थानपर बैठे हुए दो दिन हो गये, तुमने मुखमें जलतक नहीं डाला। जबतक तुम जल-पान न करोगी, तबतक बहू भी जल न पियेगी। इस बालिकाका मुख देखकर तुम कुछ अन्न ग्रहण करो। प्रभु तो भावोंके वश हैं, वे कहाँ हैं, कौन जानता है? तुम इतनी चिन्तित क्यों होती हो? जानती हो, वे क्या वस्तु हैं? उनके लिये क्या चिन्ता! माँ, शान्त होओ!

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शची—पण्डित, समय बहुत हो गया है। देखो उस कृष्णको, भोर होते ही गोष्ठमें भेज दिया था। उससे कह दिया था, 'बेटा ! तुझे एक पल भी आँखोंसे ओझल नहीं कर सकती, देर मत करना। पर कृष्ण बड़ा निष्ठुर है, खेलमें बिल्कुल मस्त है। मैं सुबहसे उसकी बाट जोह रही हूँ, इसे वह बिल्कुल भूल गया है'।*

श्रीवास—(स्वगत) सर्वनाश ! माँ पागल हो गयीं ? क्या सचमुच पागल हो गयीं ? (प्रकाश्यमें) माँ, पैरों पड़ता हूँ, स्नान करो। (शचीके पैर पकड़ना)

शची—मैं स्नान करूँगी ! कृष्ण घर न आवे, यह क्या हो सकता है ? वह आयेगा, तो उसे ऊखलसे बाँधूँगी। जब वह माँ-माँ कहकर पुकारेगा, तब छोड़ूँगी। फिर उसे नहलाऊँगी। माखन खिलाऊँगी, तिलकोंसे सजाऊँगी। तब मैं नहाऊँगी, (जोरसे साँस लेकर) पण्डित, देखो तो, कृष्ण आ रहा है कि नहीं ?

श्रीवास—(विष्णुप्रियाके पास आकर) देवी ! उठो और माँको सान्त्वना दो। तुम तो जानती हो, हमारे प्रभु स्वयं श्रीकृष्ण हैं। जीवोंका दुःख दूर करनेके लिये ही धराधामपर पधारे हैं। उनके इस महत्कार्यमें तुम और माँ सहायक हैं। देखो, शची माँ पागलोंकी भाँति प्रलाप कर रही हैं। प्रभु इस समय घर नहीं हैं, उनकी अनुपस्थितिमें माँके रक्षणावेक्षणका भार तुमपर ही है। उठो, देवी ! उठो, जीवोंका दुःख समझकर अपना दुःख कम करो। मैं बाहर

---

* यहाँ शची माँका नन्दरानी-भाव दर्शनीय है। यह भाव प्रभु-विरहके गुरुत्वका प्रतीक है। —अनुवादक

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जा रहा हूँ, तुम माँको उठाओ। यदि उन्हें धैर्य न दे सको तो उनके मुख और मस्तकपर जलके छींटे मारती रहो। (ऊर्ध्वमुखकर) प्रभु ! हे हमारे प्राणनाथ ! तुम जीव-दुःखसे व्याकुल हो, पर एक बार माँकी दशा देखो। (विष्णुप्रियाके प्रति) देवी ! उठो भी, मैं जा रहा हूँ। माँको सान्त्वना दो।

सहचरी—बहिन उठो, माँको धीरज दो। तुम्हारे अतिरिक्त उन्हें और कोई धैर्य नहीं दे सकता।

विष्णु०—(उठकर) सखी ! वे क्या श्रीकृष्ण हैं ? तो क्या मैं राधिका हूँ ?

सहचरी—हाँ, इसमें क्या संदेह है ?

विष्णु०—तो श्रीकृष्ण मथुरा गये हैं, यही न ?

सहचरी—हाँ, मथुरा गये हैं। पुनः आयेंगे।

विष्णु०—तो मैं श्रीकृष्ण-विरहिणी हूँ। सखी ! तुम राधाके विरह-वर्णनमें एक पद सुनाओ, जिससे मैं अपनी विरह-यन्त्रणा कम कर सकूँ।

सहचरी—अच्छा, सुनो—

गान

प्राणनाथेर पथ चेये आँधल आँखि।
छटपट करे आमार पराण पाखी॥
से बिना प्राण बाँचे ना, से ना कि सइ जाने ना,
जानिया से दुःख देय, कि करि सखि !
आमार मन कत जना, करे तार उपासना,
आमि थाकि आर मरि सखि, तार क्षति की ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

से तो मोरे खूँजे ना, तातो मन वूझे ना,
तबु सखि, तार लागि, झूरे दू आँखि।
जत मोरे दुःख देय,
तत माया बेड़े जाय,
बलरामेर गौर बिना आर उपाय की ?*

*विष्णु*०—(शचीका कण्ठ पकड़कर रोदन) माँ ! शान्त रहो, तुम्हारे पुत्र श्रीकृष्ण हैं, तुम क्या यह नहीं जानतीं ?

शची—(अट्टहास करके) कृष्ण ! आया है ? आज तुझे बाँधूँगी। तुझे न देखकर मेरी पलकोंमें प्रलय होती है और तू निष्ठुर ! माँके प्रति इतना निर्दय ! ठहर, पहले मैं एक रस्सी ले आऊँ।

*विष्णु*०—(क्रन्दन कर) माँ ! पागल हो गयी हो ? (ऊपरकी ओर देखकर) प्रभु दयामय ! माँपर करुणा करो। हे दीनदयाल ! तुम जितना दुःख देना चाहो, मुझे दो; किंतु मेरी वृद्धा माँ कैसे दुःख सहेंगी ? प्रभु ! माँको सान्त्वना दो !

* (पद्यानुवाद) प्राणनाथका पथ देखते-देखते आँखें अन्धी हो गयी हैं और मेरे प्राण-पखेरू छटपट करते हैं। उनके विना मेरे प्राण नहीं वचते। हे सखि ! इस बातको क्या वह जानता नहीं ? किंतु वह जानते हुए भी दुःख देता है। हे सखि ! बताओ, मैं क्या करूँ ? मुझ-जैसी कितनी स्त्रियाँ उसकी उपासना करती हैं। (इसलिये उसकी बलासे) मैं बचूँ अथवा मरूँ। सखि ! उसकी क्या हानि है ? वह तो मुझे खोजता नहीं है, किंतु मन इस बातको नहीं समझता। तब भी सखि ! उसके लिये दोनों नेत्रोंसे झर-झर पानी बहता है। वह जितना मुझे दुःख देता है, उतनी ही माया बढ़ी जाती है। बलरामदास कहते हैं कि गौराङ्गप्रभु (की कृपा) के अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शची—(चैतन्य प्राप्त कर) कौन, बेटी विष्णुप्रिया ! बेटी ! निमाई कहाँ है ? तुमने मेरे निमाईको क्यों छोड़ दिया ? (दोनोंका कण्ठ पकड़कर रोदन) ओ निमाई ! तू कृष्ण है ? हा कृष्ण कृपामय ! हम नारी हैं, तुम्हारी लीला कैसे समझ सकेंगी ?

(मूर्च्छित होना)

विष्णु०—(शचीको पकड़कर) सखी ! शीघ्र जल लाओ । माँके मुखमें डालो, वे अचेत हैं । देखती हूँ, यह तो दाँत भिंच गये हैं । (पटाक्षेप)

(३)

(एक वटवृक्षका तला—वृक्षका आश्रय लेकर श्रीनिमाई बैठे हैं—उनके श्रीअङ्गमें कौपीन-बहिर्वास आदि नहीं हैं ।)

निमाई—(बायें हाथपर अपना मुख रखकर स्त्रियोंकी भांति फूट-फूटकर रोते हुए) हे कृष्ण ! एक बार दर्शन दो । एक बार ! फिर चाहे तुम सौ वर्षतक अदृश्य रहना । मेरे प्राण जा रहे हैं, मुझे कहाँ छोड़ गये ! हे नाथ ! तुम तो दयामय हो, मुझपर कृपा करो । मैं बड़ा दुखी हूँ; क्योंकि तुम्हें खो चुका हूँ । हे कृष्ण ! तुम्हें छोड़कर मेरा और कौन है ? तुम्हारे विना त्रिभुवन अंधकार-मय है ! प्राण जाते हैं ! प्राण जाते हैं ! (निताई, चन्द्रशेखर, मुकुन्द एवं गोविन्दका प्रवेश) प्राण जाते हैं !

(धूलमें लोटपोट)

निताई—ये हैं प्रभु ! (सभीका प्रभुको पकड़कर उठाना, प्रभु आश्रय लेते हुए नेत्र बंद करके बैठते हैं) प्रभु ! कल हमें

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

छोड़कर कहाँ चले गये थे ? रात्रिभर आपको खोजा है। आज आपका क्रन्दन सुनकर यहाँ आ सके !

चन्द्रशेखर—ऐसा करुणायुक्त क्रन्दन संसारमें और कोई नहीं कर सकता। अहा धन्य है, धन्य है, ऐसे शीतमें नंगे शरीर ही सारी रात्रि बिता दी।

निताई—हे कलिहत जीव ! देख, तेरे लिये तेरे प्राणेश्वर कितना दुःख उठा रहे हैं, देख ! प्रभु ! आप इस प्रकार जीवोद्धार तो नहीं कर रहे, जीव-हत्या ही कर रहे हैं। आपकी ऐसी अवस्था देखकर कौन जीवित रह सकता है ? हमारा हृदय तो कठोर है, इसलिये हम जीवित हैं। हाँ, तो ठीक है, पूर्ण सनातन ब्रह्म कंगालका वेश धारण कर, कौपीन पहनकर पतित जीवोंके द्वार-द्वारपर जाकर उनके कल्याणार्थ भिक्षा करते फिरेंगे ! देखें, अब ये कठोर जीव क्या करते हैं।

(निताई गाते हैं)

गान

तोरा आय रे पुरवासीगन,
आनन्देते करि संकीर्तन ॥
तोरा भवेर मेलाय, धूला खेलाय, हारास ने जीवन-रतन !
चेये देख ओ तापित जीव !
तोदेर सम्मुखे दाँड़ाये ये पूर्णब्रह्म सनातन।
देख रे ऐ काङ्गाल वेशे !
तोदेर गोलोक धामे लये जेते एसेछेन जीवनेर जीवन !
देख रे ऐ चेये देख ! *

---

* (पद्यानुवाद) नगरवासियो ! तुमलोग आओ। आनन्दपूर्वक

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(दो ग्वालोंका प्रवेश और प्रभुको देखकर हरिध्वनि, हरिध्वनि सुनकर प्रभुका आँखें खोलना)

निताई—(प्रभुका मुख देखकर) प्रभुने नेत्र खोल लिये हैं, किंतु बाह्यज्ञान अब भी नहीं आया। देखो तो, ये बेचारे ग्वाले, ईश्वरको क्या जानें; पर प्रभुके दर्शनमात्रसे इनके मुखसे हरिध्वनि हो रही है।

(निमाईका उठकर बैठना, ग्वालोंका पुनः हरिध्वनि करना)

निमाई—(खड़े होकर) किसने मधुर नाम लिया? (इधर-उधर देखना)

निताई—(मुकुन्दके प्रति) आज हमें और प्रभुको उपवास करते चार दिन हो गये हैं। किसीने न कुछ खाया-पिया है और न नींद ही ली है। प्रभु तो इन दिनों पूर्णरूपसे अचेत रहे हैं। हम इतना पुकारकर और हर प्रकारसे यत्नकर थक गये, पर उन्हें चैतन्य न कर सके। क्षुधा, तृषा, अनिद्रा, पथश्रम, माँका विरह, विष्णु-प्रियाका विरह किसीसे भी चैतन्य प्राप्त न हुआ, किंतु कर्णोंमें हरिध्वनिके प्रविष्ट होते ही चैतन्यलाभ हो गया। ऐसी शक्ति मनुष्यमें क्या सम्भव है?

हरिकीर्तन करें। तुमलोग संसाररूप मेलेमें, धूलमें खेल-खेलकर अपने जीवन-रूप रत्नको मत खोओ। संतप्त जीवो! एक बार इधर देखो, तुम्हारे सामने पूर्णब्रह्म सनातन इस कंगालवेशमें खड़े हैं। अरे, एक बार देखो, तुम सभीको गोलोक-धाम ले जानेके लिये जीवनके भी जीवन हमारे प्रभु आये हैं, देखो, ध्यानसे देखो।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(ग्वालोंकी हरिध्वनि)

निमाई–(इधर-उधर ताककर ग्वालोंको देख) भाई ! तुम कौन लोग हो ? तुमने यह मधुर हरिनाम कहाँसे प्राप्त किया ? भाई ! (ग्वालोंके सिरपर हाथ रखकर) मेरे कान इतने दिनोंसे उपवास कर रहे थे, तुमने उनमें मधु उँड़ेल दिया । भाई ! पुनः यह नाम सुनाओ । (ग्वालोंकी हरिध्वनि) । भाई ! मैं मर रहा था, तुमसे मधुर हरिनाम सुन प्राण प्राप्त कर लिये । श्रीकृष्ण तुम्हारा मङ्गल करें । एक बार फिर बोलो । (हरिध्वनि) । भाई ! एक उपकार और करो । मैं नवागत हूँ, पथ नहीं जानता । श्रीवृन्दावन किस मार्गसे जाऊँ, कृपाकर बता दो ।

(पीछेसे निताईका शान्तिपुर-मार्ग दिखानेके लिये संकेत करना । निताईके संकेतानुसार ग्वालोंका शान्तिपुरकी ओर हाथ करना । निमाईका उसी बताये हुए पथपर धीरे-धीरे चलना)

निताई–(चन्द्रशेखरके प्रति) मैं प्रभुको भुलाकर शान्तिपुर ले जाऊँगा । आप द्रुतगतिसे शान्तिपुर जाइये, वहाँ श्रीअद्वैतप्रभुसे कहिये कि वे इस पार नौका लेकर घाटपर हमारी प्रतीक्षा करें ।

(चन्द्रशेखरका मार्ग काटकर, वस्त्रसे मुख ढककर शान्तिपुरकी ओर गमन)

निमाई–(रुककर सोचते हुए) अवन्तिनगरका विप्र ही साधु है, जिसने सर्वस्व त्यागकर श्रीवृन्दावन जाकर श्रीकृष्णभजन किया था । मैं भी उसी पथका अनुसरण करूँगा । साधु ! साधु ! विप्र, तुम्हीं धन्य हो ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निताई—(साथियोंसे) इस समय प्रभुको बाह्य ज्ञान हो गया है, आशा है। हमें पहचान सकेंगे। (पथ रोककर खड़े होना)

निमाई—(मुख उठाकर) आप कौन हैं ? आप परिचित-से प्रतीत होते हैं। (कुछ सोचकर) श्रीपाद नित्यानन्द !

निताई—हाँ, मैं वही अधम हूँ !

निमाई—मैं श्रीवृन्दावन जा रहा हूँ, तुम यहाँ कैसे ?

निताई—प्रभु ! तुम वृन्दावन जा रहे हो, सुनकर झटपट तुमसे आ मिला हूँ।

निमाई—ठीक, ठीक। बड़े आनन्दकी बात है। अब दो प्राणी श्रीवृन्दावन चलकर श्रीमुकुन्द-भजन करेंगे। (कुछ ठहरकर) श्रीपाद, श्रीकृष्ण मुझे दर्शन तो देंगे ?

निताई—(स्वगत) दुर्भाग्य, फिर वही बातें ! इस तरह प्रभु पुनः मूर्च्छित हो जायँगे। (प्रकाश्यमें) प्रभु ! ये बातें इस समय रहने दीजिये। हम तो क्षुधा-तृषासे मर रहे हैं, पहले इनकी निवृत्ति कीजिये। तुम्हें क्या ! तुम तो हरिनामसुधा-पान करके ही चिरदिन रह सकते हो, किंतु हम क्षुद्र जीव !

निमाई—भूख-प्यासको श्रीवृन्दावन पहुँचकर निवृत्त करेंगे। श्रीवृन्दावन और कितनी दूर है।

निताई—(स्वगत) प्रभुका अनुमान है कि हम वृन्दावनके निकट ही आ गये हैं, अन्यथा 'और कितनी दूर' क्यों कहते ? उनको सम्मुख सुरधुनीसे यमुनाका भ्रम क्यों न हो ? उस पार शान्तिपुर है, इस पार अवश्य ही श्रीअद्वैताचार्य नौकाके साथ मिलेंगे। (प्रकाश्यमें) श्रीवृन्दावन तो आ चुका, अभी पहुँच जायँगे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निमाई—श्रीपाद ! क्या कहते हो ? क्या मेरे भाग्यमें श्रीवृन्दावन-दर्शन हैं ?

निताई—मैं आपको यहींसे वृन्दावन दिखाता हूँ । यह एक नदी दिखायी देती है, देखते हो ? और उसके किनारे एक वटवृक्ष है न !

निमाई—(देखकर) हाँ, देखता हूँ ।

निताई—यह वटवृक्ष ही वंशीवट है और नदी यमुना है ।

निमाई—यमुना ! यमुना, यह यमुना तो फिर क्या, अभी श्रीकृष्णको देखूँगा । मैं चला !

(द्रुतगतिसे दौड़)

मुकुन्द—प्रभुके साथ छल किया है, शायद वे क्रोध करेंगे ।

निताई—इस प्रवञ्चनासे यदि मुझे नरक भी भोगना पड़े तो वह भी मुझे स्वीकार है । प्रभुने तीन दिनसे मुखमें जलतक नहीं डाला है, फिर भी उनका तेज और दौड़नेकी शक्ति देखो । चलो, हम भी उनके पीछे, जितना दौड़ सकें दौड़ें ।

(सभीका प्रस्थान)

पञ्चम अङ्क

(१)

(सुरधुनी-तट, घाटपर नौका है । श्रीनिमाई यमुनाभ्रमसे सुरधुनीमें स्नान कर एक ओर खड़े हैं, श्रीअद्वैत दूसरी ओर । श्रीनिमाई स्वरपूर्वक श्रीयमुनास्तोत्र उच्चारण करते हैं)

स्तोत्र

चिदानन्दभानोः सदानन्दसूनोः परप्रेमपात्री द्रवब्रह्मगात्री ।
अघानां लवित्री जगत्क्षेमधात्री पवित्रीक्रियान्नो वपुर्मित्रपुत्री ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(श्रीनिताई आदिका प्रवेश)

अद्वैत—हमारे नवनागर प्रभुकी यह कैसी अवस्था !

(उच्चस्वरसे क्रन्दन)

निमाई—(नेत्र खोलकर अद्वैतको लक्ष्यकर) आप कौन हैं ? शायद अद्वैत आचार्य !

निताई—हाँ प्रभु, वही हैं ।

निमाई—क्या आनन्द ! अब तीन प्राणी श्रीवृन्दावनमें सुखसे श्रीकृष्णभजन करेंगे । (कुछ सोचकर) यह क्या स्वप्न देख रहा हूँ ! अच्छा श्रीआचार्य ! आप यहाँ कैसे ? मेरी कुछ समझमें नहीं आ रहा है । मैं वृन्दावन जा रहा हूँ, मार्गमें देखता हूँ श्रीपाद नित्यानन्द, तत्पश्चात् यमुना-स्नान करके देखता हूँ—आप खड़े हैं ! मैं कुछ भी नहीं समझ पा रहा हूँ । (पूर्ण बाह्यावस्था) समझा, न यह यमुना है, न वृन्दावन ! यह सुरधुनी है और उस पार शान्तिपुर ! अच्छा श्रीपाद, यह क्या अच्छा कार्य किया ! तुम कृपाकर मुझे अपना अनुज मानते रहे हो, किंतु भाई होकर भी मुझे श्रीवृन्दावन नहीं जाने दिया, बीचमें भुलाकर यहाँ ले आये । सभी वृन्दावन चले गये, केवल मैं ही नहीं जा सका ! (रोदन) । मैं यह समझकर संन्यासी हुआ कि श्रीकृष्णको प्राप्त करूँगा, किंतु हाय ! उन्हें प्राप्त न कर सका !

अद्वैत—प्रभु, आपसे क्या कोई छल कर सकता है ? आप त्रिजगत्के प्राण तथा अन्तर्यामी हैं । आप स्वेच्छासे आये हैं । आप क्या जानते नहीं, आपके कोटि-कोटि भक्त आपके वियोगमें

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मर रहे हैं। एक वार दर्शन देकर उन्हें प्राण-दान कीजिये। प्रभु, श्रीपादने भी कोई मिथ्या बात नहीं कही है। शास्त्रमें कहा है कि गङ्गाके पश्चिममें श्रीयमुना बहती हैं।

निमाई—अच्छा, यह तो ठीक। किंतु श्रीपादने कहा यही वृन्दावन है—यह कैसे !

अद्वैत—यह क्या वृन्दावन नहीं है ? अवश्य वृन्दावन है। जहाँ आप हैं, वहीं वृन्दावन है। प्रभु, अपनी इस लीलाको संवरण कीजिये। तीन दिनोंसे उपवासी हैं। आज इस दरिद्र ब्राह्मणके घर पदार्पण कर एक मुट्ठी अन्न ग्रहण कीजिये। चलिये, अपने कोटि-कोटि भक्तोंकी प्राण-रक्षा कीजिये।

(प्रभुका हाथ पकड़ना)

निमाई—(नित्यानन्दके प्रति) मालूम होता है, तुम इसी-लिये झूठ बोलकर शान्तिपुर ले आये हो ?

निताई—मैंने झूठ बोला है, तो आपको क्या ? मैं ही नरक भोगूँगा। आपकी दुखिया माँ और कोटि-कोटि भक्तोंके प्राणोंपर बीत रही है। आप तो मायातीत हैं, आपके हृदयमें दया-माया नहीं है, किंतु हमलोग मायामुग्ध जीव हैं, यह कैसे सहन कर सकते हैं ? प्रभु, क्षमा कीजिये, चलिये, अब श्रीअद्वैत आचार्यके घर चलें।

(प्रभुका हाथ पकड़कर प्रस्थान)

(२)

(शान्तिपुरमें श्रीअद्वैतका घर। श्रीनिमाई, अद्वैत, हरिदास आदि बैठे हैं।)

हरिदास—द्वारपर आठ बलवान् द्वारपाल नियुक्त कर दिये

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हैं; यह अच्छा ही हुआ, अन्यथा प्रभुके दर्शनार्थ जो भीड़ होती जा रही है, उससे यह घर-द्वार सब चूर्ण हो जाता।

मुकुन्द—श्रीपाद नित्यानन्द शची ठकुरानीको लेने गये हैं, उनके साथ नवद्वीपवासी भक्त भी आयेंगे। शायद वे शान्तिपुरमें न समा सकेंगे और श्रीआचार्यका अन्न भी बहुत लग जायगा।

हरिदास—इसकी चिन्ता नहीं, श्रीअद्वैताचार्यका भण्डार अक्षय है। (नेपथ्यमें हरिध्वनि) शायद नवद्वीपवासी आ पहुँचे हैं। (बार-बार हरिध्वनि)

निमाई—माँ आ रही हैं।

(डोलीमें शची माँको लेकर भक्तोंका प्रवेश)

शची—(डोलीमेंसे झाँककर) क्यों, मेरा निमाई कहाँ है? मेरा निमाई कहाँ है? (प्रभुको देखकर) मेरे लाल!

(श्रीनिमाईका माँको प्रणाम)

अद्वैत—संन्यासीका किसीको प्रणाम नहीं करना चाहिये, किंतु प्रभु स्वयं भगवान् हैं, अतः सभी नियमोंसे परे हैं।

शची—(निमाईको पास बैठाकर) निमाई! इस छोटी-सी अवस्थामें किसने तेरे बाल काट डाले? जिस मुँहजले नाईने ऐसा किया है, उसे धिक्कार है। क्या उसके हृदयमें दया न थी? मेरी बड़ी इच्छा थी कि तू कुछ दिन नवद्वीपमें रहता, किंतु ठाकुर केशव भारतीने उसे पूरा न होने दिया।

निमाई—माँ! उन्हें क्यों दोष देती हो, सभी दोष मेरा है। मेरी मति भ्रष्ट हो गयी थी, तभी संन्यास ले लिया, अन्यथा कृष्ण-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रेमका, जो जीवका परम पुरुषार्थ है, अर्जन संन्यास न लेकर भी किया जा सकता है ।

शची—निमाई ! मेरे हृदयमें कितनी बातें उठती हैं । बारह वर्षकी अवस्थामें तू पितृहीन हुआ था, मैंने तुझे विद्याध्ययन कराया । निमाई ! क्या तुझे इसीलिये भागवत पढ़ायी थी कि तू मुझे अनाथिनी कर देश-देशान्तरको चला जायगा ? बता, उस हतभागिनी सरला विष्णुप्रियाका क्या होगा ? मैं, तेरी वृद्धा माँ जीवित हूँ । इस समय तू कौपीन पहनकर द्वार-द्वार भिक्षा माँगकर खायेगा, यह किससे सहन होगा ? फिर मैं तो तेरी माँ ठहरी ।

निमाई—(हाथ जोड़कर) माँ ! अपनी अबोध संतानको क्षमा करो । माँ ! तुमने जैसा मेरा पालन किया है, वैसा कोई नहीं कर सकती । फिर मैंने उसका बदला दिया—तुम्हारे हृदयमें दारुण आघात ! माँ ! मुझे क्षमा करो, मेरा धर्म नष्ट हो, हुआ करे, किंतु तुम्हें जो दुःख दिया है, उसका मैं प्रायश्चित्त करूँगा । माँ ! मैं संन्यास ले चुका हूँ, फिर भी तुम जो कुछ कहोगी, मैं वही करूँगा । जहाँ रहनेको कहोगी, वहीं रहूँगा । यहाँतक, यदि कहोगी 'संन्यास त्यागकर घर चल' तो यही करूँगा । मैं सत्य-सत्य प्रतिज्ञा करता हूँ । माँ ! मुझे क्षमा करो । (रोदन)

शची—(अपने आँचलसे पुत्रके आँसू पोंछते और रोते हुए) चुप हो, चुप हो ।

अद्वैत—माँ ! अब घरके भीतर चलो ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शची—चलती हूँ। आज मैं रसोई बनाऊँगी; क्योंकि फिर निमाईको न खिला सकूँगी।

(शचीका भीतर गमन)

निमाई—(भक्तोंसे) तुम एक कृष्णमङ्गल गान करो।

श्रीवास—मुकुन्द, वासुदेव, आओ हरिकीर्तन करें—

'हरि बोल, हरि बोल, हरि बोल भाई।

(कीर्तनके अन्तमें श्रीनिमाईका मूर्च्छित होना तथा भक्तोंके संतर्पणसे चैतन्य लाभ करना।)

निमाई—बन्धुगण ! मेरा निवेदन सुनो। मैंने संन्यास ग्रहण-कर जननीको बड़ा दुःख दिया है। उनका दुःख तुम स्वयं देख चुके हो। उनका दारुण दुःख देख मैंने यह कठोर प्रतिज्ञा की है कि वे मुझे जो कुछ करनेके लिये, जहाँ रहनेके लिये आदेश करेंगी, मैं वैसा ही करूँगा। यहाँतक, यदि वे घर लौट चलनेको भी कहेंगी तो मैं यह भी करूँगा। तुम कुछ प्रवीण व्यक्ति उनके पास जाकर उनका अभिप्राय अवगत करो। मैं नहीं जाऊँगा, कारण, मेरे सम्मुख उन्हें संकोच होगा। कहना कि वे कुछ भी कहनेमें संकोच न करें, वे हृदयसे जो कहेंगी, मैं वही करूँगा।

निताई—प्रभु ! यह क्या आपकी मनोगत इच्छा है ?

निमाई—तो क्या मैं माँसे छल कर रहा हूँ ?

निताई—तो श्रीआचार्य और श्रीवास ! चलो, हम चलकर माँसे पूछें। (प्रस्थान)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(३)

(शचीका घर—शची माँ बैठी हैं—निताई, अद्वैत एवं श्रीवासका प्रवेश)

निताई—माँ ! बड़ा शुभ संवाद है । इस समय आपके कहने मात्रसे ही प्रभुको घर लाया जा सकता है । उन्होंने सभी भार आपके ऊपर दे दिया है । उन्होंने कहा है कि 'माँ कहें तो मैं संन्यास त्यागकर भी घर आ जाऊँगा ।'

अद्वैत—श्रीपाद ! तुम जननीका स्वातन्त्र्य-हरण क्यों करते हो ? हम तो सेवक हैं; प्रभुने जो आज्ञा दी है, उसका पालन करना ही हमारा कर्तव्य है । सुनो, माँ ! आपको प्रभुके संन्यास लेनेसे जो दुःख हुआ है, उसे देखकर प्रभु कातर हो रहे हैं; तभी हमें आपके पास भेजा है । उन्होंने प्रतिज्ञा की है कि आप जो कहेंगी, वही करेंगे; जहाँ रहनेको कहेंगी, वहीं रहेंगे । यहाँतक, यदि संन्यास त्यागकर घर आनेको कहेंगी तो यह भी करेंगे । वे आपका अभिप्राय जाननेके लिये स्वयं ही आ रहे थे, पर उनके आनेसे आपको संकोच होता, इसीसे वे नहीं आये और हमें भेजा है । आपकी क्या इच्छा है, बताइये, प्रभु वही करेंगे ।

निताई—माँकी क्या इच्छा हो सकती है ! माँ ! तुम कह दो कि संन्यास त्यागकर घर आवें !

अद्वैत—श्रीपाद ! यह आपका अन्याय है । माँ ! आप इन बातों-पर ध्यान न दें । आपकी जो इच्छा हो, वही कहें ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शची–(कुछ देर चुप रहकर) उसने मेरा गौरव बढ़ानेके निमित्त मेरी अनुमति चाही है। वह क्या वस्तु है, मैं नहीं जानती; पर मैं क्या हूँ, वह जानता है। वैसे वह मेरा मत खूब जानता है। मेरा मत क्या होगा ? मेरा एक ही मत हो सकता है, किंतु 'घर चलो' यह मैं नहीं कह सकती।

निताई–(रोकर) माँ ! क्या कहती हैं ? आप क्या प्रभुको डुबाना चाहती हैं ? जब आपको यह सुविधा प्राप्त है कि आप जो कहेंगी, प्रभु वही करेंगे, फिर यहाँ यह सब बातें क्यों कहती हैं ? आप माँ होकर उनको क्या घरसे बाहर करेंगी ?

शची–तो क्या मैं माँ होकर उसका भविष्य नष्ट करूँगी ? मैं ऐसी माँ नहीं हूँ। मैं अग्निमें जल मरूँ, यह अच्छा है; किंतु निमाईका अकल्याण हो, ऐसा कार्य नहीं करूँगी। उसने संन्यास ले लिया है, अब यदि वह त्यागता है तो उसका पतन हो जायगा। इस समय मैं अपने सुखके लिये निमाईको पतित करूँ, यह नहीं हो सकता। मेरी क्या इच्छा है, इसे कौन नहीं जानता ? मेरी इच्छा है कि निमाई घर आवे। निमाई मेरी इच्छा जानता है और यह भी जानता है कि मैं उसकी माँ हूँ। उसका धर्म नष्ट हो, ऐसा कार्य करनेके लिये मैं कभी न कहूँगी। उसने संन्यास ले लिया है, अब कोई साधन नहीं। अब वह घर नहीं आ सकता; यहाँतक, वह गाँवमें रह भी नहीं सकता। फिर भी, यदि वह नवद्वीपके निकट किसी स्थानमें रहे तो मैं भी बीच-बीचमें जाकर उसे देख सकूँगी। पर यह भी ठीक नहीं; वह पासमें रहेगा और मैं जाऊँगी, तुम सभी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जाओगे और जाकर 'घर चलो, चलो घर' कहकर उसे अपने पथसे विमुख करोगे। इसलिये मेरा मत है कि वह श्रीक्षेत्र (पुरी) में निवास करे। वहाँसे मैं उसका संवाद भी बीच-बीचमें पाती रहूँगी और तुमलोग भी वहाँ जा सकोगे। वह भी गङ्गास्नान करने आ सकेगा, अतः वह श्रीक्षेत्रमें ही रहे।

अद्वैत—इसीलिये स्वयं भगवान्ने आपके उदरसे जन्म लिया है। ऐसा निःस्वार्थ प्रेम प्रभुकी माताके ही उपयुक्त है।

श्रीवास—आपने जैसी अनुमति दी, वैसी संसारमें कोई भी माँ नहीं दे सकती। और सब तो यही कहतीं—घर चलो।

शची—(रोती हुई उठकर) निमाई, निमाई! तेरी माँ कैसी है, देख जा! माँ होकर मैंने तुझे घरसे निकाल दिया। मेरे बच्चेका तो कोई दोष नहीं है, उसने तो मेरे ऊपर ही सब कुछ छोड़ दिया है। निमाई, निमाई, निमाई!

(मूर्च्छित होना, सभीका व्यस्त होना)

(४)

(श्रीनीलाचल, समुद्रतट, संन्यासी निमाई और अवधूत निताई बैठे हैं।)

निताई—प्रभु आपकी अवस्था देख मेरा हृदय विदीर्ण हो रहा है। आप क्या-से-क्या हो गये हैं! आपकी प्रकाण्ड देह, असीम बल—इस समय खड़े होते ही पृथ्वीपर गिरे पड़ते हैं। आप हमारे प्राण, प्राणोंके भी प्राण हैं। आपकी यह अवस्था देख हम कैसे

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्थिर रह सकते हैं। आप नित्यप्रति समुद्र-परिमाण नयन-जल निकालकर अपनी प्राण-हत्या कर रहे हैं।

निमाई—श्रीपाद! मेरा जो दुःख है, उसे प्रकट करनेके लिये तुम-जैसे व्यथितके अतिरिक्त कोई अन्य पात्र नहीं है। मेरे दुःखकी सीमा नहीं है। मैं दुःख-सागरमें डूब रहा हूँ।

नितार्इ—आपको क्या दुःख है प्रभु? दुःख तो आपने स्वयं स्वीकार किया है। जीव हरिनाम नहीं लेते, देखकर उनके कठोर हृदयोंको द्रवित करनेके लिये आपने संन्यास लिया, अतः संन्यास-जनित दुःख तो आपने स्वयं अपने कंधोंपर लिया है। किस प्रकार श्रीकृष्णके लिये व्याकुल होकर उन्हें प्राप्त किया जा सकता है, इन पतित जीवोंको सिखानेके लिये आप सदा क्रन्दन करते रहते हैं, व्याकुल रहते हैं। यह दुःख तो आपने माँगकर लिया है। *

निमाई—श्रीपाद! मेरा दुःख दो प्रकारका है। एक मेरे स्वयंके निमित्त और दूसरा अन्योंके निमित्त।

नितार्इ—आपका स्वयंके लिये क्या दुःख है, सुनूँ तो?

निमाई—अपने लिये यह कि श्रीकृष्णको प्राप्त नहीं किया, उन्हें प्राप्त करके भी खो दिया। देखते नहीं, श्रीकृष्ण-विरहमें मेरे नेत्र मेघस्वरूप हो गये हैं।

---

* श्रीचैतन्य महाप्रभु साक्षात् ईश्वर हैं, किंतु 'श्रीकृष्ण क्या हैं, उन्हें प्राप्त करनेकी क्या आवश्यकता है, कैसे प्राप्त किया जा सकता है, श्रीकृष्ण-विरह क्या है' आदि विषय जगत्के जीवोंको बतानेके लिये उन्होंने भक्तभाव अङ्गीकार कर और सभी प्रकारके सुखोंको त्यागकर संन्यासजनित कठोर दुःख स्वीकार किया है।—अनुवादक।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निताई—प्रभु ! यह तो रहने दीजिये । अपने मनकी बात आप ही जानें । श्रीकृष्ण-विरह क्या वस्तु है, यह दिखानेके लिये आपने इस विरहको स्वीकार किया है, अतः इसे तो छोड़िये । आपका अन्योंके निमित्त क्या दुःख है, बताइये सुनता हूँ ।

निमाई—श्रीपाद ! जीवोंका दुःख देख मेरा हृदय विदीर्ण हुआ जाता है । उनके दुःखको श्रीकृष्ण अनायास ही दूर कर सकते हैं । जो कृष्ण-नाम है, वही कृष्ण हैं । नाम और नामी सदा अभिन्न हैं । नामद्वारा अनायास ही उनके श्रीचरण प्राप्त हो जाते हैं, किंतु जीव उन्हें भूलकर भवसागरमें पड़ चक्कर काट रहे हैं, यही सोचकर मेरा हृदय फटा जाता है ।

निताई—प्रभु ! आप जगत्का उद्धार करते हैं और आपने किया है । इस समय आपकी कृपासे समस्त पृथ्वी हरिनाममय हो गयी है । क्या सेतुबन्ध, क्या गौड़देश; सभी स्थानोंमें जैसी आपकी कृपा-तरङ्ग उठी है, वैसी किसी देश, किसी स्थान, किसी युगमें नहीं उठी ।

निमाई—श्रीपाद ! मेरे मनकी बात सुनो । यह ठीक है कि मैं हरिनाम-वितरण कर रहा था; किंतु उसमें बाधा आ गयी । जीवोद्धार न हो सका । इसी बातका स्मरण कर हृदय विदीर्ण हुआ जाता है ।

निताई—बाधा क्या ?

निमाई—हरिनाममें असीम शक्ति है, उसीका मैं वितरण करने चला था । क्या कहूँ, कहते लाज आती है । श्रीकृष्णने जीवमात्रके हृदयको प्रेमका आकर-स्थान कर रक्खा है । हरिनाम-वितरण करनेसे

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मेरे हृदयमें प्रेम-तरङ्ग उठी और मैं उसमें डूबने लगा। मेरे द्वारा जीवोद्धार होनेकी सम्भावना नहीं रही।

(निताईका कण्ठ पकड़कर गान)

गीत

आमार मन येन आज करे रे केमन,
आमाय धरो निताई !
ओ निताइ, जीवके हरिनाम बिलाते,
उठलो ढेउ प्रेम-नदी ते,
सेइ तरङ्गे आमि एखन भासिया जाइ !
ओ निताइ, जे दुख आमार अन्तरे,
एमन व्यथित केवा कब कारे,
जीवेर दुखे आमार हिया विदरिया जाय !
आमार संचित धन सब फुराइल,
तबू जीव उद्धार ना हइल,
एखन, महाजनेर दाये आमि बिकाइया जाइ ! *

श्रीपाद ! गोलोकसे कृपामयी श्रीमती राधासे जो धन लेकर आया था, वह बीत गया है। अब जीवोद्धार कैसे हो, बताओ ?

* (पद्यानुवाद) आज मेरा मन न जाने कैसा हो रहा है, हे निताई ! मुझे पकड़ो। हे निताई ! जीवोंको हरिनाम-वितरण करनेमें (मेरी हृदयरूपी) प्रेम-नदीमें जो तरङ्गें उठी हैं, उनमें मैं बहा जा रहा हूँ। निताई ! मेरे हृदयमें दुःख है (उससे मैं जितना व्यथित हूँ) उतना व्यथित कौन है, यह मैं किससे कहूँ। जीवोंके दुःखसे मेरा हृदय विदीर्ण हुआ जा रहा है। मेरा सारा संचित धन बीत गया, फिर भी जीवोद्धार नहीं हुआ। अब मैंने स्वयंको महापुरुषोंके हाथ बेच दिया है। (अब यह उनका उत्तरदायित्व है कि शेष कार्यको पूरा करें।)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निताई—प्रभो ! आपके शुभ आविर्भावसे संसारमें जो श्रीहरिनाम-प्रेमकी तरङ्ग उठी है, उससे पूरे जगत्का उद्धार हो जायगा। स्त्री-पुरुष-बालक, म्लेच्छ-पतित कोई वञ्चित न रहेगा।

निमाई—श्रीपाद ! मैंने संन्यास लेकर देश-त्याग किया, तुम मेरे स्नेहसे आबद्ध होकर मेरे साथ आये, इससे क्या हुआ ? यही कि गौड़देशका उद्धार नहीं हुआ। तुम्हारे अतिरिक्त यह कार्य कौन करेगा ?

निताई—प्रभु ! आपकी क्या आज्ञा है, बताइये मैं आपके लिये सौ बार प्राण दे सकता हूँ।

निमाई—मेरी यही विनती है—तुम गौड़देश लौट जाओ।

निताई—मैं यह नहीं कर सकता। मैं एक क्षण भी आपको छोड़कर नहीं रह सकता।

निमाई—श्रीपाद ! हमें अपने सुखकी ओर ध्यान देनेका अधिकार नहीं है। हम यदि अपने सुखकी वाञ्छा करेंगे तो जीवोद्धार नहीं होगा।

निताई—यदि हरिनाम-प्रचारके लिये वहाँ किसी भक्तको भेजना है तो किसी औरको भेज दीजिये; आपके तो लाखों भक्त हैं। और भेजनेकी आवश्यकता ही क्या है ? श्रीअद्वैत आचार्य तो वहाँ हैं ही।

निमाई—श्रीपाद ! गौड़देश बड़ा कठोर स्थान है। वहाँ सभी जीव 'ज्ञान' को लेकर उन्मत्त हैं। श्रीआचार्यके 'ज्ञान'से वहाँ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उतना लाभ नहीं होगा। वहाँ वही सफल हो सकता है, जो तुम्हारी तरह 'प्रेम'में उन्मत्त हो।

निताई—समझा।

निमाई—गौड़देशमें अनेक महाज्ञानियोंका निवास है। वहाँ यदि कोई ज्ञान-चर्चा करेगा तो वे भी ज्ञानकी बात करेंगे। इससे केवल तर्क होगा, कोई लाभ नहीं। तुम यह सब न करना। यदि कोई व्यक्ति हरिनाम न ले तो तुम रोकर उसके पैरों पड़ना; तभी वह ज्ञान छोड़कर श्रीकृष्णकी शरणमें आ सकेगा।

निताई—प्रभु! आपके पैरों पड़ता हूँ। आपको छोड़कर जानेपर मैं प्राण-रक्षा न कर सकूँगा।

निमाई—(निताईका हाथ पकड़कर) श्रीपाद! बाधा न दो। जीवोंके प्रति मेरा स्नेह कितना है? उनके प्रति मुझमें जितना भी प्रेम है, वह सब मैंने तुमसे ही प्राप्त किया है। तुम गौड़देश जाओ, दुखी जीवोंका उद्धार करो। श्रीपाद! मैं तुमसे अत्यन्त कातरता-पूर्वक प्रार्थना करता हूँ। (क्रन्दन)

निताई—(रोते हुए) मैं शरीर हूँ, आप प्राण हैं। मेरा स्वातन्त्र्य कुछ नहीं है। आप जो आज्ञा देंगे, वही करना होगा।

निमाई—श्रीपाद! जीवोंके कारण मैंने संन्यास लिया है, किंतु मेरी अपेक्षा करोड़गुना त्याग तुम्हें ही करना पड़ेगा।

निताई—यह कैसे?

निमाई—तुम अवधूत हो, संसार तथा कामिनी-काञ्चन त्याग चुके हो, पर अब फिरसे तुम्हें संसारमें प्रवेश करना होगा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निताई—कैसे ? उससे क्या लाभ होगा ?

निमाई—विवाह करके गृहस्थ बनना पड़ेगा । ऐसा करनेपर तुम शास्त्रमतानुसार पतित हो जाओगे । समाजकी दृष्टिमें पृथ्वीपर सर्वापेक्षा घृणित रहोगे । मनुष्य तुम्हारा उपहास करेंगे, तुमसे घृणा करेंगे; तुम्हें पाखंडी बतायेंगे, तुमपर छि:-छि: करेंगे ।

निताई—यह सब मुझे क्यों करना पड़ेगा ।

निमाई—सुनो ।* मैंने संसार त्याग दिया है, तुम तो पहले ही त्याग चुके हो; अतः मनुष्योंको विश्वास हो गया है कि बिना संसारका त्याग किये श्रीकृष्णभजन नहीं हो सकता । इस विश्वासके दृढ़ हो जानेके कारण अब केवल उदासीन व्यक्ति ही श्रीकृष्ण-भजन करेंगे और उनमें अधिकांश पाखंडी होंगे ।

निताई—इसके बाद !

निमाई—इस लिये तुम्हें गृही होकर जगत्के जीवोंको दिखाना होगा कि श्रीकृष्ण-भजनके लिये संसारका त्याग करनेकी आवश्यकता नहीं है । आवश्यकता है—केवल कृष्णप्रेमकी ! प्रेमसे ही सब कुछ हो सकता है । यदि तुम गृहस्थ हो जाओगे, तो मनुष्य समझेंगे कि भजन-साधनमें सदा संसार-त्याग करनेकी आवश्यकता नहीं है ।

निताई—प्रभु ! समझा । जीवोद्धारके लिये आपने माँ और विष्णुप्रिया देवीका वध किया है । मैं क्षुद्र हूँ, अतः अब मेरा भी

---

* यहाँ श्रीचैतन्यदेवने स्पष्ट कर दिया है कि ईश्वरोपासनार्थ गृहत्याग-की कोई आवश्यकता नहीं; वह गृहस्थीमें रहकर हो सकती है।—अनुवादक

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वध करना चाहते हैं। यही सही, मेरा सर्वनाश हो, पर जीवोद्धार हो जाय। (क्रन्दन)

निमाई—देखो—श्रीपाद ! तुम्हारे इस असीम शक्तिसम्पन्न पवित्र शरीरसे कितना कार्य होता है। मैं पहले ही कह चुका हूँ, बहुत लोग तुम्हारे गृहस्थाश्रममें प्रवेश करनेसे तुमसे ग्लानि करेंगे। उस समय तुम मनमें यही सोचना—मेरा कर्तव्य है कि दूसरोंके दुःखको अपने कंधोंपर लेकर उसे दूर करूँ।

निताई—जीवोंका दुःख दूर करनेमें जो दुःख उठाना पड़ेगा, वह तो दुःख नहीं, महान् सुख है। मुझे ऐसा दुःख यथेष्ट परिमाणमें दीजिये।

निमाई—यह तो मैं जानता हूँ कि तुम दयालु शिरोमणि हो, फिर भी श्रीपाद ! मेरा एक निवेदन है।

निताई—कहिये, आपकी क्या आज्ञा है, मैं प्राणपणसे पालन करनेको प्रस्तुत हूँ।

निमाई—तुम जिस समय गौड़देशमें हरिनाम-वितरण करो, उस समय मनुष्योंमें भेदभाव रखकर यह कार्य न करना। जिसे सामने देखो, उसीका उद्धार करना। एक बात स्मरण करा दूँ, जो स्वस्थ हैं, उन्हें तो चिकित्सक या ओषधिकी आवश्यकता नहीं है। इस प्रकार तुम यदि साधु पुरुषोंका ही उद्धार करते हो तो यह तो स्वस्थ पुरुषोंकी चिकित्सा करना होगा। तुम्हें ऐसा नहीं करना है। जो जितना पतित और पापी हो, वह उतना ही तुम्हारी कृपाका पात्र है। 'पहले पापी, पीछे दूसरा।' समझे तो ? एक बात और भी है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निताई—कहिये, कहिये । विलम्ब न कीजिये । मैं चला, आपकी आज्ञाका पालन करनेके लिये एक ही दौड़में गौड़देश जाऊँगा ।

निमाई—श्रीपाद ! जो पण्डित लोग हैं, जिनके मनमें यह विश्वास है कि हम बड़े ज्ञानी हैं, हमारे जाननेके लिये कुछ भी नहीं बचा; अथवा जो दाम्भिक हैं, जिनके मनमें विश्वास है कि हम बड़े साधु या भक्त हैं, ऐसे लोगोंके समान दुखी और हतभाग्य विश्वमें और कोई नहीं है । देखो, तुम्हें गौड़-देशमें बहुत-से पण्डित मिलेंगे, जो शास्त्र लेकर ही सब कुछ करते हैं और भगवत्प्रेम या भगवद्भक्तिसे सर्वथा रहित हैं । तुम्हें उनके प्रति विशेष कृपा करनी है ।

(गदाधरदास, वासुदेव घोष, रामदास आदि भक्तोंका प्रवेश तथा प्रभुको साष्टाङ्ग प्रणाम)

निमाई—कौन गदाधर ? कौन रामदास ? क्या वासु ? आओ, आओ, मैं तुम्हें स्मरण कर रहा था, भाग्यसे तुम आ ही पहुँचे । श्रीपाद गौड़देशमें जीवोद्धार करने जा रहे हैं, तुमलोग भी उनके साथ जाओ ।

निताई—प्रभुकी आज्ञा सुनो ! पहले जो कोई सम्मुख आवे, उसीका उद्धार करो । दूसरे, जो जितना पापी है, उसपर उतनी ही कृपा करो । तीसरे, जो बड़ा पण्डित, ज्ञानी, धर्माभिमानी है, उसपर सर्वापेक्षा अधिक कृपा हो ।

वासुदेव—जिसे देखो—उसीका उद्धार करो, ऐसी आज्ञा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीभगवान् ही दे सकते हैं। हम यदि निज शक्तिसे यह कार्य करने चलेंगे तो कोई भी हरिनाम नहीं लेगा; पर प्रभुकी आज्ञासे जा रहे हैं, तब किसकी शक्ति है कि उसकी अवहेलना करे ? जिसे भी हरिनाम देंगे, वही ग्रहग्रस्त व्यक्तिकी भाँति उसे ग्रहण करेगा।

निताई—तो उठो, चलें।

भज गौराङ्ग, कह गौराङ्ग, लह गौराङ्गेर नाम।
जे भजे गौराङ्ग चाँद, सेइ आमार प्राण ॥

(गाते हुए सभीका प्रस्थान)

(५)

(नवद्वीपधाम, सुरधुनीतट, न्यायालंकार एवं विद्यावागीशका प्रवेश)

न्याया०—पागलोंकी एक टोलीने आकर गौड़देशमें हलचल मचा रक्खी है।

विद्या०—हाँ, चारों ओर केवल हरिध्वनि सुनायी देती है, जिसने देशको पवित्र कर दिया है।

न्याया०—सुनो, किस प्रकार पवित्र किया है। कृष्ण-चैतन्यने नीलाचलसे दस-बारह पागलोंको यहाँ भेज दिया है। किसलिये ? जीवोद्धार करने ! वे सभी पागल हैं। उस दलमें एक व्यक्ति है—गदाधरदास ! उसने पानिहाटि ग्रामके काजीके पास जाकर कहा—'ओ रे काजी ! बाहर निकल और हरि बोल, नहीं तेरा सिर काट दूँगा।' काजी क्रोधातुर हो 'कौन है रे' कहकर उसे पकड़ने और मारने दौड़ा, पर उसे देखते ही नम्र हो गया। भाग्यसे उसने

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कुछ कहा नहीं, किंतु वह यवन है। उसके पास अपनी सिद्धाई दिखानेके लिये जानेकी क्या आवश्यकता थी ?

विद्या०—वह सिद्धाई नहीं है। श्रीकृष्णचैतन्यने उन्हें एक ऐसी शक्ति देकर भेजा है, जिससे उन्हें देखकर मनुष्य द्रवीभूत एवं भक्तिमान् हो जाते हैं।

न्याया०—क्या तुम्हारा भी सिर फिर गया है ?

विद्या०—सिर नहीं फिर गया। सुनो; उन्हें आहार-निद्रा, विश्रामकी चिन्ता नहीं रहती। वे तो रात-दिन आनन्दरसमें पगे रहते हैं। फलेन परिचीयते*। उन्होंने अबतक लाखों मानवोंको भक्ति-पथका पथिक बना डाला है। वे यदि पागल भी हैं तो केवल अपने कार्यके पागल हैं।

न्याया०—क्यों ? वे क्या पण्डित हैं ? वे क्या शास्त्र जानते हैं ? उन्होंने क्या तपस्या की है ? केवल नाचते-गाते घूमते हैं। (नेपथ्यमें गीत) यह देखो, कौन आ रहे हैं, शायद वे ही लोग हैं।

(एक भक्तका नाचते और गाते प्रवेश)

(गान)

हरिनाम दिया जगत माताले आमार एकला निताइ।
संगे गौर थाकले कि ना होतो ॥†

---

* फलसे परिचय मिलता है।

† हरिनाम देकर अकेले निताईने जगत्को मतवाला कर दिया है; यदि साथमें गौर भी होते तो न जाने क्या होता !

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

न्याया०—आओ, तुम कौन हो ? कुछ देर ठहरो । शीघ्रता क्यों करते हो ?

भक्त—(रुककर गाते हुए)

'संगे गौर थाकले कि ना होतो।'

न्याया०—गौर होते तो क्या होता ?

भक्त—भाई, अकेले श्रीनित्यानन्दने जगत्को हरिनाम-प्रेममय कर दिया है, साथमें यदि गौराङ्ग प्रभु भी होते तो न जाने क्या होता ?

विद्या०—तुम्हारे निताई क्या करते हैं ?

भक्त—समस्त विश्वमें समानता स्थापित करते हैं; बड़ेको छोटा, छोटेको बड़ा बनाते हैं। जो पापी हैं, उसे परम भक्त, जो शीर्ष-स्थानीय व्यक्ति हैं, उन्हें तृणापेक्षा दीन करते हैं। अहा, भुवन-मङ्गल हरिनाम विश्वभरमें छाया जा रहा है।

न्याया०—अपने निताईको एक बार यहाँ ला सकते हो ? उससे कहना कि वह अपने इस कार्यमें मुझसे परामर्श ले। केवल पागलपन दिखानेसे कुछ नहीं होता।

भक्त—श्रीनित्यानन्द परामर्श लेंगे ? वे आजकल माली बने हुए हैं, कैसे ? सुनोगे ? (भक्त गाता है)

गान

धरे नाओ से किशोरीर प्रेम, निताइ डाके आय।
निताइ डाके आय आय, अद्वैत डाके आय *॥

(नृत्य)

---

* (पद्यानुवाद क्रमशः) श्रीनिताई पुकारकर कहते हैं—लो, श्रीमती राधाका वह प्रेम (जिसे श्रीगौराङ्ग अपने साथ लाये हैं) ग्रहण

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आमार निताइ माली, माथाय डाली, प्रेम-फल बिलाय।

इसके पश्चात् निताई क्या करते हैं; सुनो।

(गान एवं नृत्य)

ए प्रेम कलसे कलसे बिलाय, तबू ना फुराय।
जत बिलाय तत बाड़े, फुराय ना फुराय ना ॥*

और एक बात नहीं सुनी, देशमें जो तरङ्ग आयी है—

(नृत्य एवं गान)

प्रेमे शान्तिपुर डूबू डूबू, नदे भेसे जाय।†

विद्या०—(टूटे स्वरमें) यह सब देख-सुनकर मेरे प्राण कैसे हुए जाते हैं ? (भक्तका हाथ पकड़कर) अरे भाई, तुमने ऐसा भाव कहाँ प्राप्त किया ?

भक्त—क्या भाव ?

विद्या०—यही जो आनन्दमें झूम रहे हो !

न्याया०—थोड़ी मदिरा पी ली है, और क्या है ?

विद्या०—यह बात नहीं है। मद-पानसे जो मत्त होता है, उसे देखकर तो घृणा होती है। पर इन्हें देखकर प्राण रो उठते हैं।

करो। श्रीनिताई और श्रीअद्वैत पुकार-पुकार कर कहते हैं—आओ-आओ ! हमारे निताई माली है, जिनके मस्तकपर प्रेम-फलकी डाली है और वे उन्हें लुटा रहे हैं।

* इस प्रेमको श्रीनिताई घड़े भर-भरकर लुटाते हैं, फिर भी वह समाप्त नहीं होता। जितना लुटाते हैं, उतना ही बढ़ता जाता है। समाप्त नहीं होता, समाप्त नहीं होता।

† इस प्रेममें शान्तिपुर डूब-उतरा रहा है और नवद्वीप बहा जा रहा है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

न्याय०—विद्यावागीशके प्राण रो उठते होंगे । देखो सँभलना, कहीं गिर न पड़ो । सिरपर जल डालूँ क्या ?

विद्या०—(भक्तके प्रति) तुम्हारे श्रीनित्यानन्द प्रभु कहाँ हैं ?

भक्त—वे इसी मार्गसे होकर जायँगे । यह सुनो कीर्तनकी ध्वनि ।

(दूरसे कीर्तन-ध्वनि, श्रीनिताईका भक्तोंसहित नृत्य-कीर्तन करते हुए प्रवेश । भक्तगण नृत्यके साथ-साथ गान करते हैं ।)

गान

हरि बोलो, हरि बोलो, हरि बोलो भाइ
नाम बिना कलियुगे आर गति नाइ ।
ओ[1] दिन बये[2] गेलो[3] रे ।
मिछे[4] काजे[5] तोरे[6] दिन बये गेलो रे ।

पहला भक्त—(श्रीनिताईके प्रति) प्रभु, ठहरिये । यहाँ दो जीव हैं, इनका उद्धार कीजिये ।

निताई—तब ठीक है । प्रभुकी आज्ञा है—जिस किसीको आगे देखो, उसीका उद्धार करो । मार्ग रोक लो, जिससे ये भाग न सकें । (विद्यावागीशका हाथ पकड़कर) तुम हो एक ! तुम्हारी परीक्षा करता हूँ ? तुम क्या अपने मनमें यह सोचते हो कि मैं बड़ा पण्डित हूँ ?

---

१. अरे । २. ३. बीत गये । ४. ५. व्यर्थके काममें (ढोंग करते-करते) । ६. तेरे ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विद्या०—नहीं, मैं तो बड़ा अज्ञानी हूँ।

निताई—ठीक, तो क्या यह सोचते हो कि मैं बड़ा साधु हूँ?

विद्या०—नहीं, मैं तो बड़ा अधम हूँ।

निताई—तो तुम अभी ठहरो। छोड़ तो सकता नहीं; क्योंकि मेरे सम्मुख आ गये हो, किंतु तुम्हारा रोग बहुत भारी नहीं है। कुछ देर बाद चिकित्सा होनेसे भी काम चल सकता है।

विद्या०—समझा नहीं।

निताई—तो समझो। हमारे स्वामी श्रीगौराङ्ग प्रभु हैं, उनकी आज्ञा है कि जिस किसीको सामने देखो, उसीका उद्धार करो। तुम सामने आये हो, अतः अब बच नहीं सकते।

विद्या०—यह जो कहा—मेरा रोग उतना भारी नहीं है, मेरी चिकित्साके लिये कुछ देर भी की जा सकती है, इसका क्या अर्थ है?

निताई—सुनो, हमारे प्रभुने यह भी कहा है कि जो लोग दाम्भिक या पाण्डित्याभिमानी हैं, उनका सबसे पहले उद्धार होना चाहिये। तुम वैसे नहीं हो, अतः अभी उद्धार नहीं होगा।

विद्या०—नहीं, यह नहीं होगा। मैंने जो अपना इतना मात्र परिचय दिया है कि मैं दीन हूँ—यह तो मेरा कष्ट है। मेरा मन तो अभिमानसे पूर्ण है। मेरा अभी उद्धार कीजिये।

निताई—अच्छा, यही सही। पर तुम्हारा उद्धार भी मैं क्या करूँगा! तुम्हारा उद्धार तो हो चुका। तुम तो प्रभुके निज-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जन हो, तुम्हारा हृदय भक्तिसे पूर्ण है । तुम्हारे ऊपर तो प्रभुकी पूर्ण कृपा है ।

विद्या०—(क्रन्दन करते हुए) आप मेरा उद्धार कीजिये ।

निताई—अच्छा, हरि बोलो ।

विद्या०—हरि बोल, हरि बोल, हरि ।

निताई—(विद्यावागीशका हाथ पकड़कर) आओ, हरि बोलें और नृत्य करें । (दोनोंके मुखसे हरिबोल-ध्वनि । दोनोंका नृत्य, विद्यावागीशका गिरना और मूर्च्छित होना ।)

निताई—(जोरसे) प्रभु ! प्रभु ! यह एक और सेवक लीजिये ।

पहला भक्त—ये एक सज्जन और बचे हैं—हमारे न्यायालंकार महाशय !

निताई—तभी तो, छिपकर बैठे हैं ! छिपनेसे काम नहीं चलेगा । अब तुम्हारी बारी है । प्रभुकी आज्ञा सुनी है ? जिसे सामने पाओ—

न्याया०—सुनो, मेरी ओर मत आना, अन्यथा ठीक नहीं होगा ।

निताई—बहुत ठीक होगा, तुम्हारा भी और मेरा भी !

न्याया०—यह देखो, मेरे हाथमें छड़ी है । आये तो मार दूँगा ।

निताई—मार तो मेरा भूषण है । तुम्हीं क्या, बहुतोंने मुझपर प्रहार किया है । इन बातोंको छोड़ो । आप क्या पण्डित हैं ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

न्याया०—हाँ, पण्डित हूँ, तुम्हारी तरह मूर्ख नहीं ।

निताई—आप क्या बड़े साधु हैं ?

न्याया०—हाँ, साधु, तुम्हारी अपेक्षा अधिक साधु ! तुम्हारी तरह इतना पाखण्डी नहीं !

निताई—तब तो ठीक हुआ । तुम तो विशेष कृपाके पात्र हो । तुम्हें तो अभिमान भी बहुत है । जिसे अभिमान है, वही भगवान्से बहुत दूर है; अतः तुम्हारा उद्धार करना मेरा प्रथम कर्तव्य है । प्रभुकी ऐसी ही आज्ञा है ।

न्याया०—रहने दो अपना पाखण्डपना, मैं तुम्हारे प्रभुको नहीं मानता ।

निताई—प्रभुको नहीं मानते ! शायद उन्हें देखा नहीं, उनके कार्य नहीं देखे । यही, उनकी अवस्था सत्ताईस वर्षकी है । रूपमें श्रीकृष्ण-जैसे हैं । पाण्डित्यकी अवधि नहीं । जीवको दुःखमें देखकर रोते हुए मूर्च्छित हो जाते हैं । जीवोंपर इतनी कृपा करते हैं कि दो-तीन वर्षोंमें ही कोटि-कोटि व्यक्ति उनके शरणापन्न हो चुके हैं । तुम मानते नहीं उन्हें !

न्याया०—नहीं, नहीं मानता ।

निताई—उनकी शक्ति देखो । जैसे ही इन विद्यावागीश महाशयके कर्णोंमें हरिनाम-उच्चारण किया, ये प्रेममें मूर्च्छित हो गये । यह भगवान्की शक्तिके अतिरिक्त और क्या है ? इस प्रकार हमारे प्रभुकी कृपासे कोटि-कोटि मनुष्योंका श्रीकृष्ण-प्रेम पाकर उद्धार हो गया और हो रहा है ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

न्याया०—क्या विद्यावागीशका उद्धार हो गया ? तो विद्यावागीश ! (झाँककर देखना) कितना उद्धार हो गया ?

निताई—इस प्रकार सरलतासे उन्हें चेतन नहीं करा सकते। मैं चेतन कराता हूँ। (विद्यावागीशके कर्णोंमें उच्च-स्वरसे हरि-नामोच्चारण, उनका नेत्र खोलना तथा उठकर दोनों भुजाएँ उठाकर 'हरि बोल' 'हरि बोल' कहकर नृत्य करना।)

न्याया०—क्यों विद्यावागीश ! पागल हो गये हो।

विद्या०—(नृत्य करते हुए) पागल हो गया हूँ। हाँ, पागल ! पागल ! मैं पागल हो गया हूँ, तुम भी पागल हो जाओ और सारा जगत् पागल हो जाय। अब देख रहा हूँ कि भगवान् मङ्गलमय हैं। वे मेरे हैं, मैं उनका—वह मेरे प्राणोंके प्राण !

निताई—(न्यायालंकारके प्रति) देखा, श्रीकृष्णभजनका फल। ये विख्यात अध्यापक हैं। अटल, गम्भीर और ज्ञानवान् हैं। आनन्दमें नृत्य कर रहे हैं। इस आनन्दका मूल्य प्राणोंसे भी अधिक है।

न्याया०—हुआ करे, मेरे पास मत आना।

निताई—तुम क्या बचकर चले जाओगे ? यह नहीं होगा, प्रभुकी ऐसी आज्ञा नहीं है।

न्याया०—जाऊँगा नहीं तो क्या ?

निताई—अब नहीं जा सकोगे।

न्याया०—मैं हरिनाम न लूँ, तो क्या करोगे ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निताई—यह देखो, क्या करूँगा—(हाथ जोड़कर) महाशय; हरिनाम ग्रहण कीजिये। आपसे प्रार्थना करता हूँ।

न्याया०—जाओ, जाओ, मैं नहीं लूँगा।

निताई—(स्वरसे)

एस भाई करि बूके, हरिनाम बोलो सुखे।*

(सहज स्वरमें) हरिनाम बोलो और मुझे खरीद लो। मैं तुम्हारा सेवक बनूँगा। (दाँतों तथा हाथोंमें तृण रखकर) अच्छा, अब मैं तुमसे प्रार्थना करता हूँ; हरिनाम लो। हरि कहकर अनायास ही भवसागरसे तर जाओगे। हरिनाम लेकर दयामय श्रीकृष्णपर कृपा करो।

न्याया०—जाओ, मुझे तंग मत करो। मैं नहीं ले सकूँगा, मैं घर जाऊँगा।

निताई—(घुटने टेककर) भाई, मैं ऐसा सौभाग्य क्यों छोड़ूँ? हे भगवन्! हे कृष्ण! हे गौर! इन न्यायालंकार महाशयको लीजिये। (रोदन) भाई आओ! सब मिलकर अपने प्राणनाथको भजें। तुम जिनके हो, मैं भी उन्हींका हूँ! मैं उन्हें भजूँ और तुम न भजो, यह कैसे हो सकता है?

न्याया०—जैसे भी हो। मैंने तो निश्चय कर लिया है, मैं घर जा रहा हूँ।

निताई—शुभ कार्यमें क्या विलम्ब! नहीं हुआ, नहीं हुआ, हे भगवन्! इन न्यायालंकार महाशयको ग्रहण कीजिये। (पृथ्वीपर लोट-पोट करते हुए) प्राण जा रहे हैं। प्राण जा रहे हैं। हे

* आओ भाई, तुम्हें हृदयसे लगा लूँ। आनन्दसे हरि-हरि बोलो।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भगवन्! यदि इस समय इनको नहीं ग्रहण करोगे, तो मैं निश्चय ही अपना मस्तक फोड़कर आत्महत्या कर लूँगा।

न्याया०—यह मेरा कैसा भोग है? यह देखो, मुझे रोना आ रहा है, लोग क्या कहेंगे। यदि इस समय मैं हरि, हरि, हरि बोलता हूँ तो लोग मेरा उपहास करेंगे। मैं हरि-हरि नहीं कहूँगा। (जोरसे चिल्लाकर) हरि बोल हरि, कभी नहीं बोलूँगा, हरि बोल हरि! यह तो स्वतः ही मुखसे निकल रहा है। यह कैसा भोग है, हरि बोल हरि!

निताई—(उठकर न्यायालंकारका हाथ पकड़कर) आओ भाई नृत्य करें।

(दोनोंका हाथ पकड़कर नृत्य करना)

न्याया०—रह गया! मैं न्यायालंकार ही अकेला रह गया। हे श्रीगौराङ्ग! मुझे बचाओ, अभीतक मुझे बहुत नचाया। अब क्षमा करो। इस दीन, शुष्क, कठोर, ज्ञानाभिमानी, निर्बोधको श्रीचरणोंमें आश्रय दो। (मूर्च्छित होना)

निताई—किसीको भी नहीं छोड़ूँगा। आओ भाई, अपने नवीन कृष्णदासको घेरकर नृत्य करें।

(न्यायालंकारको घेरकर सभीका हाथ पकड़े हुए मण्डलाकार नृत्य एवं गान करना)

गान

कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण हे।
राम राघव राम राघव राम राघव पाहि माम्।
कृष्ण केशव कृष्ण केशव कृष्ण केशव रक्ष माम्॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(६)

श्रीनिमाईका घर, श्रीमती विष्णुप्रिया जप कर रही हैं। उनके आगे एक खाली और एक चावलोंसे भरा पात्र रक्खा है।)

विष्णु०—कांचना, इधर आओ। (कांचनाका प्रवेश) आज मैंने एक आश्चर्यजनक घटना देखी है।

कांचना—ठकुरानी, आप बातें न कीजिये, नहीं आहार कम रह जायगा। एक माला जपती हैं; एक चावल उठाकर रखती हैं। वहाँ थोड़े-से चावल आपका पूरे दिनका आहार होता है। आप रोज एक मुष्टि चावलोंका आहार करके इतने दिनोंतक जीवित रह सकी हैं, यह केवल प्रभुकी कृपा है।

विष्णु०—हुआ करे। आज उन्हें संसार छोड़े पाँच वर्ष हो गये। उनके साथ मेरा भी इहकालका सुख नष्ट हो गया; किंतु आज मेरा हृदय आनन्दसे परिप्लुत हो रहा है, मेरा वाम नेत्र आनन्दसे नृत्य कर रहा है; इसका कारण क्या है—समझमें नहीं आता।

कांचना—देवी! आपने जैसा कठोर व्रत लिया है, वैसा कभी किसीने नहीं लिया। निश्चय ही प्रभु आकर आपको दर्शन देंगे।

विष्णु०—अभी गङ्गा-स्नान करके आयी तो क्या देखा?

कांचना—आप जब स्नान करने जाती हैं, तब शची माँका अंचल पकड़कर जाती हैं; उस समय आपके दोनों नेत्र माँके पाद-पद्मोंमें लगे रहते हैं, फिर आपने देखा कैसे?

विष्णु०—मैंने हरिध्वनि सुनकर मुख उठाया। सुना, कोटि-कोटि

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भक्त ब्रह्माण्ड भेदते हुए हरिध्वनि कर रहे हैं। देखा कि उस पार कुलियानगरमें बहुत-से लोग भुजाएँ उठाकर हरिध्वनि तथा नृत्य कर रहे हैं। सोचा, अवश्य ही इनमें प्रभु हैं। प्रभुके बिना यह कार्य और कौन कर सकता है? यह मेरा भ्रम था या नहीं, मैं कह नहीं सकती। उनके बीचमें एक व्यक्ति नृत्य कर रहा था और सभी उसके चारों ओर नृत्य कर रहे थे। तुम कहोगी कि उसे देखा किस प्रकार, सो इसका कारण स्पष्ट है; वह व्यक्ति सबसे अधिक लंबा और सुन्दर था।

कांचना—तो निश्चय ही वे हमारे प्रभु ही हैं; क्योंकि करोड़ों व्यक्तियोंमेंसे दिखायी दे सके, ऐसा दीर्घकाय व्यक्ति उनके अतिरिक्त और कोई नहीं है। तुम कहती हो, वह सर्वापेक्षा सुन्दर है तो हमारे प्रभुका वर्ण भी कच्चे स्वर्ण-सा है। ऐसा वर्ण और किसीका नहीं है।

(नेपथ्यमें कोलाहल और हरिध्वनि। एक भक्तका प्रवेश)

भक्त—क्यों, कहाँ हैं? शची माँ कहाँ हैं? प्रभु आ रहे हैं!

(विष्णुप्रिया देवीका भीतर गमन तथा शची माँका प्रवेश)

शची—क्या कहते हो भैया!

भक्त—कहता क्या हूँ! आज बड़ा शुभ दिन है। प्रभु घर पधार रहे हैं।

शची—तुम क्या मुझे ठग रहे हो? वह तो संन्यासी है, वह घर कैसे आयेगा?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(नेपथ्यमें हरिध्वनि)

भक्त—यह सुनो, वे आ रहे हैं। माँ, तुम क्या जानती नहीं, संन्यास लेकर एक बार जन्मभूमि दर्शन करनेके लिये आना पड़ता है, उसी नियमानुसार प्रभु आ रहे हैं।

(भक्तोंसहित श्रीनिमाईका प्रवेश)

शची—यह क्या मेरा निमाई ! आओ बेटा, मेरी गोदमें आओ। (प्रभुका माँको प्रणाम)

निमाई—माँ, मैं तुम्हारी अबोध संतान हूँ। मुझसे तुम्हारी कोई सेवा नहीं हुई। मैं तुम्हें कुछ सुख न दे सका।

शची—छिः ! बेटा, ऐसी बात मत कहो। तुम जिसकी संतान हो, उसे दुःख कैसा ? मैं तुम्हारी गर्भधारिणी होनेसे श्रीकृष्णकी कृपा पा सकूँगी। फिर दुःख कैसा ?

निमाई—(उठकर) माँ, मैं चला।

शची—निमाई ! आज यहाँ भिक्षा करो। मैं तुम्हें अपने हाथसे रसोई कर खिलाऊँगी।

निमाई—माँ, तुम श्रीआचार्यके घर जाओ, मैं वहीं चल रहा हूँ। वहाँ मैं तुम्हारे हाथसे भिक्षा करूँगा।

(सर्वाङ्ग वस्त्रसे ढककर विष्णुप्रिया देवीका प्रवेश तथा प्रभुको साष्टाङ्ग प्रणाम)

निमाई—(दो पग पीछे हटकर) तुम कौन हो, क्या चाहती हो ?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विष्णु०—मैं आपकी दासीकी दासी हूँ । प्रभु ! आपकी कृपासे त्रिजगत्‌में सभीका उद्धार हो गया, केवल हतभागिनी विष्णुप्रिया ही पड़ी रह गयी । प्रभु ! आपसे और क्या प्रार्थना करूँगी ? मुझे क्या अभाव है ? मैं घर रहती हूँ, आप जंगलमें ! मैं वस्त्र पहनती हूँ, आपका कौपीनमात्र संबल है ! अन्तिम कालमें आपके श्रीचरण प्राप्त हो सकें, मेरी यही प्रार्थना है ।

निमाई—श्रीकृष्ण कृपामय हैं; उनका भजन करो ।

विष्णु०—मैं आपको ही जानती हूँ, और किसीको नहीं । आप ही ऐसा कुछ मुझे दे जाइये, जिससे, जितने भी दिन मैं जीवित रहूँ, आपके स्मरण-मननमें समय विता सकूँ ।

निमाई—(कुछ सोचकर) अच्छा, अपने बदले अपनी यह दोनों खड़ाऊँ तुम्हें देता हूँ । इन्हें ग्रहण करो ।

(पादुका प्रदान करना)

विष्णु०—(पादुकाओंको प्रणामकर) तुम्हीं मेरे प्रभु हो, मैं तुम्हारी पूजा करूँगी । तुम्हें अपने हृदयमें धारणकर अपनी विरह-यन्त्रणा दूर करूँगी ।

(खड़ाऊँ चूमना तथा उन्हें मस्तकपर रखकर धीरे-धीरे प्रस्थान करना । सभीका हरि-ध्वनि करना)

(यवनिका-पतन)

(इतिश्री)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi